** श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् **

श्रीरासप्रबन्धः

श्रीपाद प्रबोधानन्दसरस्वतीविरचितः

श्रीहरिदासशास्त्री

प्रकाशक * मुद्रक :—

श्रीहरिदासशास्त्री

श्रीगदाधरगौरहरि प्रेस,

श्रीहरिदासनिवास

कालीदह वृन्दाबन

जिला—मथुरा। उत्तर प्रदेश

प्रकाशनतिथि :—८।६।८०

श्रीगौराङ्गाब्द ४६४

प्रकाशन सहायता ३.००

ग्रन्थ—५४

विज्ञप्ति— ६

पृष्ठ संख्या—६०

** श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् **

श्रीरासप्रबन्धः

श्रीपाद प्रबोधानन्दसरस्वतीविरचितः

सच

श्रीवृन्दाबनधामवास्तव्येन

न्याय-वैशेषिकशास्त्रि, न्यायाचार्य, काव्य, व्याकरण,
सांख्य, मीमांसा वेदान्त, तर्क, तर्क, तर्क,
वैष्णवदर्शनतीर्थ, विद्यारत्नाद्युपाध्यलङ्कृतेन

श्रीहरिदासशास्त्रिणा सम्पादितः।

सद्ग्रन्थ प्रकाशक :—

श्रीगदाधरगौरहरि प्रेस,
श्रीहरिदासनिवास
कालोदह वृन्दाबन
जिला—मथुरा। उत्तर प्रदेश

** श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम् **

*—**—*

विज्ञप्तिः

श्रीरास प्रवन्ध नामक ग्रन्थ—मुद्रित हुआ, यह ग्रन्थ आश्चर्य रास प्रवन्ध अद्भुत रास प्रबन्ध नाम से प्रसिद्ध है, ग्रन्थ रचयिता श्री पाद प्रवोधानन्द सरस्वती हैं, श्रीमद् भागवतीय रास लीला के अनुसरण से यह ग्रन्थ लिखित होने पर भी गुम्फन वैचित्री से यह एक अनुपम आस्वादनीय ग्रन्थ में परिणत हुआ है। प्रथमत ३, २५, ३४, ४६, ६१, ७०, १२३, १५६, १७०, २०४, २१६, २३२, २४०, २५२,

२६६, २८०, श्लोक विभिन्न छन्दों में रचित होकर यह सूत्र स्थानीय है, एवं २८० श्लोक सम्पूर्ण रास प्रबन्धका निष्कर्ष प्रतिपादक है, सूत्र स्थानीय श्लोक के अवलम्बन से विवृत्ति रूप श्लोक समूह पज्झटिका छन्द से ग्रथित हुआ है। उस का लक्षण—प्रतिपद यमकित षोड़श मात्रा नवमगुरुत्व विभूषित गात्रा, पज्झटिका पुनरत्र विवेकः क्वापि न मध्यगुरुगणएकः ।

अन्यान्य ग्रन्थ में श्रीसरस्वतीपाद प्रेमोन्मत्त होकर धारा वाहिक रचना में असमर्थ थे, किन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ में आप की धारा वाहिक रचना सफल हुई है, आप की भाषा में पुष्पित वृन्दावन का दृश्य इस प्रकार है—

कुसुमितपल्लवितद्रुमवल्लि स्फुटितकदम्बकर्किशुकमल्लि
स्मेरकुमुदकरवीरविराजि, प्रहसितकेतकचम्पकराजि ॥१०॥
विकसित कूटज कुन्द मन्दारं सुफलित पनसपूगसहकारं
हरिचरणप्रिय तुलसी विपिनैः शोभमान मुरुपरिमल मसृणैः ॥११॥
विलसज्जातीयूथिकमतुलं विकचस्थलपङ्कजवकमञ्जुलं
सन्ततसन्तानकसन्तानंवरहरिचन्दनचन्दनविपिनं ॥१२॥

पारिजातवनपरमामोदं राधाकृष्णजनितबहुमोदम्
कुरुवकमरुवकमाधविकाभि र्दमनकदाड़िममालतिकाभिः ॥१३॥
शेफालिकया नवमालिकया शोभितमपि बहुविधभिन्टिकया,
ललितलवङ्गवनैरतिमधुरं नवपुन्नागरुचिरुचिरम् ॥१४॥
स्तवकितनवकाशोकवनालि स्मेरशिरीषपरिस्फुटपाटलि ।
बन्धुरमभिनवबन्धुकविपिनैः शोभितमभितस्तिलकाम्लानैः ॥१५॥

ग्रन्थ नाम करण में आश्चर्य एवं अद्भुत शब्द प्रयोग से इस में यथेष्ट वैलक्षण्य एवं अद्भुतत्व है, श्रीपादने प्रथमतः ३-२४ श्रीवृन्दावन की वर्णना की है, यह भी वृन्दावन शतक के अनुरूप है, २५-३२ में श्रीकृष्ण के रास विलासी रूप की वर्णना है, ३४, में कदम्ब तरुतल में त्रिभङ्ग भङ्गिमरूप में श्रीराधा नाम से मोहन वंशी

वादन करने पर ३५-४८ विपर्यस्त वेशभूषा से गोपीयों का अभिसार ५० श्यामानुराग से श्रीराधा का भाव की विवृति, ५६, मुरलीनिनाद श्रवण से अभिसारोद्यता राधा के प्रति सखियों का निषेध वचन। ६०।६१ श्रीराधा का अदर्शन से श्रीकृष्ण की विरह वेदना ६२--६६ गोपीगण की रस लालसा को देखकर ७०--७१ श्रीकृष्ण द्वारा निज विधुरताख्यापन, ७२ श्रीराधा से मिलनेके लिए गोपी गणके परामर्श से दूतीप्रेरण, ७३--दूती के मुख से श्रीकृष्ण की राधातन्मयता, राधा निष्ठा, एवं गोपी जन लाम्पट्य की वर्णना, ६३-६६---स्वप्न में श्री कृष्ण का श्रीराधा दर्शन, एवं रसमय वाक्यालाप श्रवण, ६७--६६-- राधानाम जप कारी श्रीकृष्ण की राधा प्राप्तिहेतु वेणु ध्वनि ॥१०० १०३ श्रीराधा विहारी श्रीकृष्ण का विलाप, गोपीगण की उपेक्षा, १०४--१०६, श्रीकृष्ण के विलाप से वृन्दावनीय स्थावर जङ्गम के रोदनादि, १११-१२० ललिता द्वारा श्रीराधा के अभिसार में वाधा प्रदान ॥१२२॥ १२४, दुती के मुख से श्रीराधा की निरोध वार्त्ता को सुनकर गोपी वेश से कृष्ण का अभिसार, १२५--१३७--उन के मुख से श्रीराधा की प्रशंसा एवं श्री हरि का निर्दोषत्व ख्यापना, १३८ १४८ श्रीराधा मिलन हेतु श्रीहरि की तीव्रतर उत्कण्ठा का प्रतिपादन १५१-१५५--श्रीकृष्ण के रूप सादृश्य को देखकर उनके प्रति श्रीराधा की परम प्रीति एवं आलिङ्गन दान। १५६-१५६ इस परिरम्भण से परिचय प्राप्तकर श्रीराधा का कुञ्जगृह में प्रवेश एवं अङ्ग सङ्ग दान १६२-१६७, युगल किशोर के रासोपयोगी पुनर्वेशधारण, १६७–१७२ निखिल कलावित् सखीगण के साथ वृन्दावन में प्रवेश, १७३-१८२, सखी गण की सेवादि, १८३-१६० वहुमूर्त्ति प्रकटन द्वारा निज काय व्यूह रूपा सखीगणके साथ रासोपभोग हेतु श्रीराधा की प्रेरणा प्रदान १६१-२०२ विविध रसास्वादन, २० ३--२०४ सखीगण के अभिमान प्रशमन हेतु श्रीराधा के साथ श्रीकृष्ण का अन्तर्धान। २०५–२१२ गोपीगण का सर्वत्र कृष्णान्वेषण एवं जिज्ञासा। २१३-२१४ श्रीहरि

पदाङ्क २१५ एवं श्रीराधा पदचिह्न दर्शन से २१६--२२४ उनका विलासानुमान, २२५--२२६, सखी गण के लिए श्रीराधा का खेद प्रकाश, एवं चलनेमें असम्मति, २२७-श्रीकृष्णका पलायन २२०-२३० श्रीराधा की मूर्च्छा, सखी समागम। २३२ श्रीकृष्णाविर्भाव २३३-२३६-गोपियों की भावविह्वलता (२३७-२६८) व्रजाङ्गनागण के साथ रासोत्सव २६९-२७६, श्रीराधाकृष्ण का युगपत् एवं क्रम नृत्य, गोपियों के गान वाद्य प्रभृति रसमय एवं काममय उत्सव २७७-२७८ जलकेलि, २७९ वसन भूषणादि का परिधान एवं कुञ्ज में शयन, इस प्रकार २८१ प्रबन्ध का निष्कर्ष यह है—

परम रस समुद्रोज्जृम्भणस्यातिकाष्ठा
परमपुरुषलीलारूपशोभातिकाष्ठा।
परमविलसदाद्यप्रेमसौभाग्यभूमा।
जयति परपुमर्थोत्कर्षसीमा स रासः॥

वह रास परमरस सागर की प्रकाश शील चरमावधि परम पुरुष लीला, रूप शोभा की चरमावधि, परम विलासमय आद्य शृङ्गार प्रेम एवं सौभाग्यातिशय व्यञ्जक एवं परमपुरुषार्थशिरोमणि की सीमा रूप में जय युक्त हो।

श्रीरास प्रबन्ध शब्द से भी भगवत् प्रेयसी रूपा लक्ष्मी गण, कवित्व सङ्गीतादि स्वरूपा सरस्वती गण, मेधा सत्प्रतिभादिरूप बुद्धि वृत्ति समूह, धर्म, अर्थ, काम, एवं सम्पद् रूपा विभूतिगण, शोभा स्वरूप, चामर व्यजनादि श्रीकृष्ण सेवाके उपकरण एवं वेशरचनादि वहुल क्रीड़ारसास्वादन ही रास है, उक्त सामग्री समूह ही श्रीराधा है, एवं श्रीराधा ही मूल भक्ति स्वरूपिणी है। गौतमीय तन्त्र में श्रीराधा स्वरूप वर्णन में लिखित है—

देवी कृष्णमयी प्रोक्ता राधिका परदेवता
सर्वलक्ष्मीमयी सर्वकान्तिः सम्मोहिनी परा॥

श्रीकृष्ण जिस प्रकार मूल भगवान् हैं अतएव उनके अंश समूह भी उन में अन्तर्भुक्त हैं, उस प्रकार श्रीराधा भी उनकी प्रधाना प्रेयसी होने के कारण आप मूल लक्ष्मी हैं, एवं उन में ही उनकी अंश भूता यावतीय लक्ष्मी गण के सुस्पष्ट समावेश हैं। अतएव आप सर्व लक्ष्मी मयी हैं, पाशाक्रीड़ा एवं वाकोवाक्यमें जयेच्छु होने के कारण आप देवी हैं, अतएब आपमें सरस्वती शालिनत्व एवं वुद्धि शालिनत्व विद्यमान है, परदेवता शब्द से धर्म, अर्थ, काम सम्पद् युक्तता का वोध होता है, कृष्णमयी— कृष्ण स्वरूपा, अतएव विभूति युक्तता हैं, सर्वकान्ति—शोभाशालिनीत्व है, राधिका आराधिका, अतएव सर्वविध कृष्ण सेवा के उपकरण सम्पन्नात्व हैं। परा सम्मोहिनी शब्द से वेश रचना शालिनीत्व का वोध होता है। इस प्रकार राधा प्रधान क्रीड़ा ही रास है॥ और यह भक्ति का चरम दृष्टान्त स्थल है। उसका प्रकार ४९ श्लोक में आपने कहा है,।

न लोक वेद व्यवहार मात्रं न गेह देह द्रविणात्मजादि
यत्राविदं स्ता न पथोऽपथो वा स कोऽपि जीयादिह कृष्णभाव:।

गोपीगण जिस भावसे समाक्रान्त चित्त होकर लोक व्यवहार वेद मर्यादा प्रभृति को भूलगई थीं, जो भाव—गृह, देह-धन पुत्रादि को भी विस्मृत करा देता है, जिस से गोपीगण सुपथ विपथ कुछ भी जान न सकीं, वह अनिर्वाच्य कृष्णभाव ही इस जगत् में अमरत्व को प्राप्त करे॥

आप के रचित ग्रन्थावलीमें सर्वत्र भाव एवं भाषा की एकता अक्षुण्ण है, परकीया भावका वर्णन आपके ग्रन्थ में सुस्पष्ट है, चैतन्य चन्द्रामृत श्रीराधारससुधानिधि, श्रीवृन्दावन महिमामृत श्रीसङ्गीत माधव, आश्चर्य रास प्रवन्ध, श्रीश्रुति स्तुति व्याख्या, श्रीगीत गोविन्द व्याख्या, कामगायत्री व्याख्या, गोपाल तापनी व्याख्या ग्रन्थसमूहों के रचयिता श्रीप्रवोधानन्द सरस्वतीपाद हैं।

हरिदास शास्त्री

※※ श्रीश्रीगौरगदाधरौ जयतः ※※

—※※—

श्रीरासप्रवन्धः

—※※—

जयति जयति राधापाङ्ग सङ्गीभुजङ्गी
कवलित उरुबाधा मूर्च्छितोऽनन्य साध्यः।
तदधर सुधयोच्चै र्जीवितः श्यामधामा
तदति विषविषङ्गे वर्णै कश्चित् किशोरः॥१
जयति जयति वृन्दारण्यचन्द्रोऽतिचित्रो
न्मदरसमय रासोल्लास संभ्रान्त मूर्त्तिः।
प्रमद मदनलीला मोहनं श्यामधामा
निरुपम सुखसीमाभीररामाभिरामः॥२

अस्तिमहाद् भुतवृन्दारण्यं सन्तत वाहि महारसवन्यम्।
परम मनोहर परम सुपुण्यं रसमय सकलधाममूर्धन्यम्॥३

—※※—

राधागदाधरं नत्वा कृष्णचैतन्य संयुतं
श्रीरासस्यप्रबन्धानां व्याख्याग्रन्थो विधीयते॥

श्रीराधा की अपाङ्ग सङ्गिनी भ्रूसर्पिणी द्वारा दष्ट एवं अनेक प्रकार पीड़ा से मूर्च्छित, अन्यान्य उपायों से दुश्चिकित्स्य होने पर भी श्रीराधा के अधर सुधा के आस्वादनसे महाविष विनष्ठ होने पर पुररुज्जीवित श्याम वर्ण के किसी अनिर्वचनीय किशोर की जय हो जय हो॥१॥ अतिशय विचित्र उन्मद रसमयरास के उल्लास से विभोर मूर्त्ति, उन्मद मदन लीलाके आवेश से मोहन स्वरूप, निरुपम सुख की सीमाप्राप्त गोप रमणीयों से वेष्टित परमरमणीय श्रीवृन्दावन चन्द्र श्याम सुन्दर की जय हो जयहो॥२॥ वृन्दावन

सकल गुणानां स्फुरदति भूमि, प्रोज्ज्वल चिन्तामणिमयभूमि
श्रुतिर्दुर्गम तृणमात्रा विभूति स्फीतमहासुखसिन्ध्वनुभूति ।४
प्रकृति परे परिपूर्णानन्दे महसि महाद्भूत हरिरसकन्दे ।
भ्राजमानमखिलोज्ज्वलरम्यं मधुरविशदहरिभावसुगम्यम् ।५
मुख्य रसात्मक परमाकारं विमलमनोज वीजरुचिसारम् ।
मायाविद्यापारमपारं राधामाधव नित्यविहारम् ॥६
राधामधुपति चारुपदाङ्कै रङ्कितमतुलसुधारस पङ्कैः ।
स्वच्छ सुशीतल मृदुल सुवासं विभ्रदवनितलमद्भुतभासम् ॥७
क्वचन परागपुञ्ज कमनीयंक्वचमकरन्द पूररमणीयम् ।
क्वचन गलित कुसुमैः कृतशोभंक्वच मणिकर्पूररज रुचिराभम् ॥८
सन्ततफल कुसुमादि विचित्रैः कोटि महासुर पादपजैत्रैः ।
गुल्मलतातरुभिः सुपवित्रैर्मण्डितमीशजुषामपिचित्रैः ॥९

नामक एक महा अद्भुत धाम है, जिस से शृङ्गार नामक महारस की वन्या निरन्तर प्रवाहित हो रहीहै, जो परम मनोहर एवं परम पवित्र है, सकल रसमय धाम के शिरोमणि स्वरूप है ॥३॥ निखिल गुणों के आकर स्वरूप उक्त धाम की भूमि अतिउज्ज्वल चिन्तामणिमय है, उस भूमि के एक तृण की विभूति भी श्रुति समूह के अगोचर व दुर्बोध्य है, उस में उच्छलित महा समुद्र की अनुभूति होती रहती है, ॥४।५॥ उक्तधाम प्रकृति से अतीत परिपूर्णानन्द, महा अद्भुत हरि रस कन्द (बीज) स्वरूप ज्योति में विराजमान हैं, तत्रत्य निखिल वस्तु ही उज्ज्वल, रम्य, अथवा उज्ज्वल शृङ्गाररस से रम्य एवं मधुर, विशुद्ध होने पर भी श्रीहरि भक्ति से ही लभ्य व सुलभ है, मुख्य श्रृङ्गार रसात्मक सुन्दराकृति विशुद्ध कामवीज की कान्ति से अत्युत्कृष्ट होकर माया, अविद्या के अतीत में स्थित है एवं श्रीराधा माधव के अपार नित्यविहार स्थल है ॥६।७॥ श्रीराधा मधुपति के सुचारु पदाङ्कसे एवं अतुलनीय सुधारस पङ्क द्वारा अङ्कित है, स्वच्छ सुशीतल मृदुल, सुवासित एवं अद्भुत कान्ति पूर्ण भूमिखण्ड से शोभित है ॥८॥ कहीं पर पराग पुञ्ज से परम कमनीय, कहींपर मणि

कुसुमित पल्लवित द्रुमवल्लि स्फुटित कदम्बक किंशुकमल्लि ।
स्मेर कुमुद करवीर विराजि प्रहसित केतक चम्पकराजि ॥१०
विकसित कूटज कुन्दमन्दारं सुफलित पनस पूगसहकारम् ।
हरि चरण प्रिय तुलसी विपिनैः शोभमानसुरुपरिमलमसृणैः ॥११
विलसज्जाति यूथिक मतुलं विकचस्थलपङ्कजवकवञ्जुलम् ।
सन्तन सन्तानक सन्तानं वर हरिचन्दनचन्दनविपिनम् ॥१२
पारिजात वन परमामोदं राधाकृष्णजनितवहुमोदन् ।
कुरुवक मरुवक माधविकाभि र्दमनक दाड़िममालतिकाभिः ॥१३
शेफालिकया नवमालिकया शोभितमपिवहुविधझिण्टिकया ।
ललित लवङ्गवनैरतिमधुरं नवपुन्नागरुचिरुचिरम् ॥१४
स्तवकित नवकाशोकवनालिस्मेरशिरीष परिस्फुटपाटलि ।
बन्धुरमभिनव वन्धुकविपिनैः शोभितमभितस्तिलकाम्लानैः ॥१५

कर्पूर रज की आभा से मण्डित है ॥९॥ निरन्तर फल कुसुमादि सम्भार से विचित्र कोटि कोटि महा कल्प वृक्ष समूह भी जय शील परमपवित्र एवं ईश्वर सेवीगणके लिए विस्मय हेतु बनकर लता गुल्म तरु गण द्वारा उक्त धाम सुशोभित है ॥१०॥ उसके प्रतिवृक्ष प्रति लता कुसुमित, पल्लवितहै, कदम्ब पलाश, मल्लिका वृक्षगण प्रस्फुटित हुए हैं। उसमें ईषत् विकसित कुमुद, करवीर पुष्प विराजित है एवं केतकी चम्पक राशि हँसरहें हैं ॥११॥ कुटज, कुन्द, मन्दार पुष्प समूह विकसित हैं, पनस गुवाक, आम्रवृक्ष समूह में सुन्दर सुन्दर फल लगे हुए हैं। महापरिमल से सुस्निग्ध हरिचरण प्रिय तुलसी कानन द्वारा सुशोभित है ॥१२॥ उस में अतुलनीय जाति, युथिका प्रभृति विलसित है, स्थलपद्म, वक वञ्जुल (अशोक, वेतस) प्रस्फुटित हैं निरन्तर सन्तानक (कल्पवृक्ष) समूह बंशविस्तार कर रहें हैं ॥१३॥ ॥१४॥ पारिजात वन की परम सुगन्ध श्रीराधाकृष्ण को आनन्द प्रदान कर रही है। कुरुवक, मरुवक माधविकादि द्वारा दमनक, दाड़िम, मालतिकादि द्वारा, एवं सेफालिका नवमल्लिका, वहुविध झिण्टिकादि द्वारा वह सुशोभित है, ललित लवङ्ग वनराजि से वह

निज निजविभवैः प्रतिपदमधिकं, विलसदनन्तजाति तरुलतिकम्
निरवधिवर्धि मधुरगुणसिन्धुसुविचिरनिन्दितकोटि रवीन्दु ॥१६
वापीकूप तड़ागैर्ललितं मणिमय केलिमहीधरमहितम् ।
रासोचितमणि कुटि्टमराजंरञ्जयदेक विमलरसराजम् ॥१७
रक्तकनक कर्पूरपरागं विभ्रद् रविजा पुलिन सुभागम् ।
राधामाधव केलिनिकुञ्जं दधदतिमञ्जुगुञ्जदलिपुञ्जम् ॥१८
मदकल कोकिल पञ्चमरागं स्थिरचर निकर मूर्च्छदनुरागम् ।
मदशिखण्डिकृत ताण्डव रङ्गं चकित चकित परिलोलकुरङ्गम् ॥१९
परमविचित्रतराकृतिरावैः खगपशुभिर्वहुभिर्वहुभावैः ।
शोभितमपि शुक सारी निचयै र्वरदम्पत्योः स्वपद विनेयैः ॥२०
अत्यद्भुततम ऋतुषट्कश्रि श्रंसितनैः श्रेयसि विपिनश्रि ।

अतिमधुर एवं पुन्नाग नागकेशर प्रभृति की कान्ति से अतिमनोहर है ॥१५॥ नव नव अशोक वनराजि स्तवकित हैं, शिरीष, कुसुम समूह ईषद् हास्य कर रहें हैं, एवं पाटल पुष्पराशि परि स्फुट हैं। अभिनव वन्धूक (वान्धुलि) पुष्पवन समूह के द्वारा मनोहर है, एवं चतुर्दिक में प्रस्फुटित अम्लान पुष्प वृक्ष राजि से सुन्दर शोभित है। ॥१६॥ अनन्त प्रकार तरु लतादि क्षण क्षण में अधिकतर निज निज शोभा समृद्धि प्रकटित कर रहें हैं। उस में निरन्तर मधुर गुण सिन्धु वृद्धि प्राप्त होरहे हैं एवं उसकी ज्योति से कोटि कोटि सूर्यचन्द्रादि भी अनादि काल तक म्लान होकर रहते हैं ॥१७॥ श्रीवृन्दावनस्थ यमुना पुलिन में सुन्दर सुन्दर भूखण्ड (स्थल विशेष) रक्त, स्वर्ण, एवं कपूर परागवर्ण के हैं, वह अति मनोज्ञ है। भ्रमर समूह द्वारा गुञ्जरित श्रीराधामाधव के केलि निकुञ्ज से सुशोभित भीहै ॥१८ उस में मदकल कोकिलोंका पञ्चम राग श्रुत होताहै, वहाँ के स्थावर जङ्गमात्मक जीव निचय अनुराग की प्रवलता से मूर्च्छित होते हैं। मदमत्त मयूर गण भी ताण्डव नृत्य से सव के कौतुहल विस्तार करते रहते हैं, एवं भयभीत महाचञ्चल हरिणगण इतस्तत विचरण कर रहें हैं ॥२०॥ परम विचित्र आकृति धारी एवं काकलि ध्वनि युक्त,

मन्द सुगन्ध सुशीतलमहला जुष्टममृतयमुनाम्भसिविशता ॥२१
आद्य विशुद्धमहारस रूपं खेलदेकवर मन्मथभूपम् ।
सान्द्रानन्द परम रसकाष्ठं राधानागर भाव गरिष्ठम् ॥२२
अधिललितादिक सुललितभावं प्रकटित सहजरसवदनुभावम् ।
निखिल निगमगणदुर्गममहिम प्रेमानन्द चमत्कृतिसीम ॥२३
शारद चन्द्रकर खचितं स्फीतरसाम्बुधि वीचीनिचितम् ।
अधिरजनीमुख मुज्ज्वल वेशः कोऽपि किशोरस्तत्र प्रविवेश ॥२४

महाचमत्कार निधानरूपविलास भूषादिभिरत्यपूर्वः ।
रासोत्सवाय प्रविशन् प्रदोषे वृन्दावनं नन्दतिकृष्णचन्द्रः ॥२५

रसमय लीलः कुवलयनीलः सकल युवति मोहनगुणशीलः ।
वहुभाव युक्त अनेकानेक पशु पक्षि समूह द्वारा श्रीयुगल किशोर के चरण प्रान्त में उपनीत शुक सारी समूह से भी शोभित हैं ॥२१॥ महा अद्भुततम षट् ऋतु की शोभा समन्वित वहाँ के कानन-श्रीमहा मङ्गल के निदान स्वरूप है। अतिसुन्दर यमुना के जलस्पर्शी मन्द सुगन्ध एवं सुशीतल पवन द्वारा उक्त वृन्दावन शोभित हैं, ॥२२॥ श्रीवृन्दावन, आद्य विशुद्ध महारस शृङ्गार स्वरूप एक मात्र महा-मन्मथ राज की क्रीड़ा भूमि है, उस में राधा एवं तदीय नागर के भाव से गरिष्ठ सान्द्र आनन्द परम रस की काष्ठा 'चरमसीमा वर्त्त मान है ॥२३॥ श्रीवृन्दावन ललितादि सखीगण के सुललित भाव माधुर्य को वहन करता है, उस में सहज रसमय अनुभाव रत्यादि सूचक गुण क्रियादि प्रकटित है, उस की महिमा समूह वेद के लिए भी दुर्वोध्यहै, एवं परमप्रेमानन्द चमत् कार की परम सीमा में वह अवस्थित है ॥२४॥ शारदीय चन्द्र किरण माला से खचित सुप्लावित एवं उद्वेलित रस सिन्ध की तरङ्ग माला से परिव्याप्तहैं ऐसे वृन्दावन में प्रदोष काल के समय में उज्ज्वल वेशधारी किसी किशोर का प्रवेश हुआ। महा चमत् कार के स्वरूप विलास भूषादि के द्वारा अति अपूर्व मण्डित कृष्णचन्द्र प्रदोष के समय रासोत्सव करने के लिए वृन्दावनमें प्रविष्ट होकर आनन्दित हुए ॥२५॥ आपकी रसमयी

कुञ्चितकेशः सकल कलेशः पीतपटाञ्चित पृथुकटिदेशः ॥२६
मकराकृति मणिकुण्डलदोलः स्फुरदतिरुचि कल्लोल कपोलः।
मुक्तारत्नविचित्र निचोलः स्मररसमधुरविलोचन खेलः ॥२७
रत्नतिलक रुचिरञ्जितभालः स्निग्धचपलकुटिलालकजालः।
कलितललिततर बहुविधमालः केलि कला रभसातिरसालः ॥२८
प्रमुदित वदन मनोहर हासः कम्बुकण्ठतट पदक विलासः।
विरचित युवति विमोहनचूड़ श्चित्रमाल्यवृत बर्हापीड़ ॥२९
पीनोरसि लसदुरु मणिहारः स्फुटदङ्गदकङ्कण रुचिधारः।
सुभग नितम्ब रणमणि रसनः परिहित रासोचितवरबसनः ।३०
मणि मञ्जीर मञ्जुरुत चरणः प्रसृमर पादाङ्गद मणि किरणः।
श्रवण विराजित रत्न वतंसकरधृत मणिमय मोहनवंशः ॥३१
राधानुस्मृति मुहुरुत्पुलकः सकलरसिक वरनागर तिलकः।

लीला है, आप कुवलय के (नीलपद्म के समान) समान नील वर्ण के हैं, एवं उन के गुण चरित्र सब कुछ ही सकल युवति को मुग्धकरने वाले हैं। कुञ्चित केश कलाप, चतु:षष्टि कला का अधीश्वर एवं निष्कलङ्क पूर्णचन्द्र हैं ॥ उनके विपुल कटितट में पीत वसन शोभित है ॥२६॥ कर्णद्वय में मकराकृति कुण्डलद्वय दोदुल्यमान है, महाज्योति तरङ्ग मालामय सुन्दरकपोल गण्ड देश है। मुक्तादि रत्न खचित उत्तरीयवसन है, आप स्मर रस से मधुर लोचन द्वयको नृत्य करारहे हैं ॥२७॥ रत्न एवं तिलक से कपाल रञ्जित, है, कुञ्चित केशदाम, स्निग्ध चञ्चल, एवं कुटिल है। सुन्दर सुन्दर अनेक प्रकार माल्य धारण कर केलि कलारभस से अति रसमय हुए हैं ॥२८-२९॥ महा आनन्दमय वदन में मनोहर हास्य है, कम्बु (रेखात्रययुक्त शङ्खवत्)कण्ठदेश में पदक का विलास नृत्य हो रहा है. चूड़ा युवतियों को मुग्ध कर रही है ॥३०॥ विशाल वक्ष में बहुविध मणिमय हार विन्यस्त है, अङ्गद, कङ्कण, की कान्तिमाला प्रकाशित है, सुन्दर नितम्ब में मणिमय रसना मधुरध्वनि कर रहीं है, एवं आप रासोचित अत्युत्तम वसन से शोभित हैं ॥३१॥ चरणों में

प्रत्यङ्गाद्‌भुत सुषमासिन्धुः प्रतिपदवर्धिमदनरससिन्धुः ॥३२

प्रोद्‌वेलाद्‌भुतमधुरिम सिन्धुः प्रकट महारसमयगुणसिन्धुः ।

मत्तमतङ्गजलङ्घिम गमनः परम रसैक निमज्जित भुवनः ।

काश्मीरागुरु चन्दनलिप्तः श्यामतनु मणि भूषणदीप्तः ॥३३

त्रिभङ्गी दिन्यासस्थित तनु कदम्ब द्रुमतले

यदा राधा नामाङ्कित मधुर सङ्केत मुरलीम् ।

निधाय श्रीविम्बाधर वरपुटे नागर गुरु

र्जगौ गोप्योऽधावन्न भिकमभितह्यॆ विविशाः ॥३४॥

अथ नीप कल्पतरु मूलगतः कलित त्रिभङ्ग ललिताङ्ग युतः ।

अरुणाधरे निहितवेणुवरः कल मुज्जगौ स रसिकप्रवरः ॥३५

श्रुत्वा माधवमुरलीनादं तत्क्षणमुज्झित गुरुजनवादम् ।

मणिमय नूपुर की ध्वनि हो रही है, नूपुरों की मणि किरण चतुर्दिक में व्याप्त है, कर्ण में रतन कुण्डल, हात में मणिमय मोहन वंशी विराजित है ॥३२॥ श्रीराधा के स्मरण से अङ्ग में मुहुर्मुहु उच्च पुलक हो रहा है, आप सकल रसिक गण के श्रेष्ठ व नागर चूड़ामणि हैं । इन के प्रति अङ्ग में अद्‌भुत सुषमा सिन्धु है, एवं प्रतिक्षण में इनका मदन रस की वृद्धि होती रहती है ॥३३॥ इन से महा अद्‌भुत माधुर्यसिन्घु उच्छलित हो रहा है, आप प्रकट महा रसमय गुणसिन्धु हैं, इनकी गतिभङ्गि मत्तमातङ्ग की भाँति अतिसुन्दर है। आप परमरस (श्रृङ्गार) के द्वारा सकल भुवन को निमज्जित कर रहे हैं आप कुङ्कुम, अगुरु, चन्दन द्वारा लिप्त देह हैं और मणिमय भूषणों से श्रीअङ्ग समुज्ज्वल हैं ॥३३॥ त्रिभङ्ग भङ्गिम रूप में खड़े होकर श्रीराधानाम का संकेत युक्त मुरली को सुन्दर विम्वाधर में रखकर नागरेन्द्र कृष्णने जव कलध्वनि की, तव ही गोपीगण विवश होकर लम्पट चूड़ामणि के निकट आने के लिए अभिसारकिए थे ॥३४॥ अनन्तर आपने कदम्वके नीचे जाकर त्रिभङ्ग सुन्दर भङ्गी की अङ्गीकार किया, अरुणवर्ण अधर पल्लव में वेणुवर को स्थापन कर वह रसिक चूड़ामणि कलध्वनि (अव्यक्त मधुर निनाद) करने लगे ।३५

ध्वन्यभिमुख मनुधावित वत्यः प्रतिदिश अभिनव गोपयुवत्यः ॥३६

काश्चिद् व्यत्यस्ताम्वरभरणाः काश्चन नूपुरक युतचरणाः ।
अपरा अञ्जितैक वर नयनाः का अपि परिहृतनिजपतिशयनाः ॥३७

स्नानमयोद्वर्त्तन मनुलेपं नोविनिबन्धनमार्जनलेपम् ।
कुर्वत्योऽति जवात् ययुरपराः काश्चिदथार्धं प्रसाधिताचिकुरा ॥३८

काश्चिद् गुर्वादिषु भुञ्जानेष्वपि परिवेशं हित्वा याने ।
चक्रमुंति मतिखण्डित लज्जाः केवल वांशिक सङ्गमसज्जाः ॥३९

काश्चन हार ग्रथने सक्ताः सूत्रकरा ययुरत्यनुरक्ताः ।
मुग्धा दुग्धावर्त्तन निरता ययुरपरा अपिहरिरसभरिताः ॥४०

लोकवेद विधिकृत ममुपेक्षा दूरदलित गृहदेहापेक्षाः ।
प्रेम महाग्रह गाढ़गृहीता हरिमभिसस्रुर्व्रज पुरवनिताः ॥४१

माधव की मुरलीध्वनि को सुनकर तत् क्षणात् गुरुजन गणों के परिवादादि को परिहार करके अभिनव गोप ललनागण उक्त ध्वनि को लक्ष्यकर दौड़ने लगी ॥३६॥ किसी के वेशभूषादि का विपर्यय हुआ किसी एक चरण में नूपुर पहना किसीने एक नेत्र में कज्ज्वल लगाया और किसी ने तो निज पतिकी शय्या को छोड़कर ही दोड़ी ॥३७॥ अपरापर गोपीगण स्नान, उवटन, अनुलेपन, नीविवन्ध एवं गृह देह मार्जन लेपनादि करते करते उसका समाधान न करके ही प्रवलवेग से घर को छोड़दिये, कोई तो केश प्रसाधन को असम्पूर्ण करके ही अभिसार किया ॥३८॥ किसीने गुरु जन को भोजन परोस ने के समय ही परोस ना छोड़कर ही अभिसार कर दिया, अहो ! वे सब ही महालज्जाशीला होने पर भी केवल वंशीधारी के साथ सङ्गम के लिए ही निर्णय कर लिए थे ॥३९॥ किसी ने तो माला निर्माण करते समय ही डोरी को हाथ में लेकर ही अनुराग से चल दिया, अन्यान्य गोपीगण दूध तपाने में रत होने पर भी मुग्ध एवं हरि रस से पूर्ण चित्त होकर अभिसार कर दिये ॥४०॥ व्रजाङ्गनाओं ने लोकमर्यादा वेदमर्यादा का सम्यक् प्रकार से उल्लङ्घन किया था। उन्होंने देह गेहादि की अपेक्षा को भी विसर्जन करदिया था, केवल प्रेम रूप

गण्डलोलमणि कुण्डल सुषमाः मुक्ताकवरभर विगलित कुसुमाः ।
विपुल नितम्ब स्तनभर विकलास्तनुरुचि प्रकटीकृतबहुचपलाः ।।४२

उपरि विनिर्मित शतशत चन्द्रमा मध्यरचित चलहेम गिरीन्द्राः ।
भुविविहितस्थल पङ्कजवलना रेजुर्दिशि दिशि ता व्रजललनाः ।।४३

नूपुर काञ्ची वलयघटानां झङ्कृत मुखरित सकलदिशानाम् ।
जङ्गमकनकलतायितवपुषां रेजेराजिः सा व्रजसुदृशाम् ।।४४

युवतीषु या निजपति संयुक्ता दैवान्तर्गृहयाता स्ताः ।
गोपै र्दृढतरपिहिते द्वारे प्रतिहत गतयः पेतुरगारे ।।४५

अशुभं पुरुषान्तर सङ्गकृतं कृत्वा विरहार्त्ता निहतम् ।
परम महामङ्गल सुनिदानं चक्रूर्मधुपति मधुरध्यानम् ।।४६

शुद्धमहारसचिद्घनदेहा हरिपर वहिरन्तर सकलेहाः ।

महाग्राह से आक्रान्त होकर उन्होंने हरि प्राप्ति के उद्देश्य से ही अभिसार किया ।४१।। उस समय उनके गण्डदेश स्थित चञ्चल मणि कुण्डल की सुषमा प्रसृत हुई, उन्मुक्त केश कलाप से कुसुम समूह विगलित होने लगे । वे सब विशाल नितम्ब व स्तन युगल के भार से विकल होगये, एवं देह कान्ति के प्रकाश से जैसे अनेकानेक विदयुन्माला को ही प्रकट किए थे ।।४२।। व्रजाङ्गनागण उपरिभाग में (मुख में) शत शत चन्द्रमा का निर्माण कर मध्यदेश में (छाती में) चञ्चलायमान सुवर्ण गिरीन्द्र (स्तन युगल) की रचना कर पृथिवी में चरण विन्यास से स्थल पद्म को प्रकाश कर विराजित थे ।।४३।। नूपुर, काञ्ची, वलय समूह के झनत्कार से दिग् वलय मुखरित हो उठेथे और व्रज सुन्दरीगण गतिशील स्वर्णलता के सदृश प्रतिभात होकर यूथ यूथ में शोभित थे ।।४४।। गोप युवतीयों में से जो निज निज पति के द्वारा संभुक्ता रही, वह दैवात् घर में घुसगई थी, उस समय गोपों ने जोर से द्वार रुद्ध करदिया, इस से निरुद्ध गति होकर वह घर में गिर गई ।।४५।। अन्य पुरुष के सङ्ग जनित अशुभ सकल हरि की आर्त्ति से विनष्ट हो जाने पर वह परम मङ्गल के सुन्दर निदान स्वरूप माधव का ध्यान करने में प्रवृत्त होगई ।।४६।। उस

सपदि प्राप्ताः प्रेष्ठ पदान्तं ताश्च तदा रुचिरास्तु नितान्तम् ।।४७।।
एवं व्रजवर युवतीवृन्दैः श्याम किशोर मदान्धैः ।
हरिगतिरिन्दिरयापि न दृष्टाप्राप्ति मदन रस मात्र निविष्टा ।।४८

न लोकवेद व्यवहारमात्रं न गेहदेह द्रविणात्मजादि ।
यत्राविदं स्ता न पथोऽपथो वा स कोऽपिजीयादिह कृष्णभावः

श्रीवृषभानो निष्कुट याता तद्दुहिता त्रिभुवन विख्याता ।
राधेत्यनुपम रसमयमहिमाशुद्धमहारति मधुरिमसीमा ।।५०
स्व स्व विभव सुचमत्कृततनुभिः पुरुषोत्तम शक्तिभिरमिताभिः ।
दूरतरादपि कृतदास्याशा सकल परमसुखकृत परिहासा ।।५१
आशैशव मतिमुग्ध प्राया श्यामिकादि कलनाकुल काया ।

समय शुद्ध महारस चिद्घन देह को प्राप्त कर अन्तर वाहर सब कार्य मे ही हरि परायणा होगई एवं सद्य ही प्रियतम के चरण के समीप में उपनीत होकर परम रुचिरता प्राप्त हुई, अर्थात् उनकी निखिल मनोभिलाष पूर्ण होगई ।।४७।। श्यामल किशोर इस प्रकार प्रेम मदान्ध व्रज युवतीगण के साथ शोभित हुये । अहो श्रीहरि का भाव का दर्शन साक्षात् लक्ष्मी ने भी नहीं किया अथच केवल कामरस निविष्ट गोपी गणों ने उसको प्राप्त किया ।।४८।। जिस भाव से वश होकर गोपीगण लोक व्यवहार एवं वेद मर्यादा को भूल ही गये थे, जिस भावने गेह देह धन पुत्रादि को विस्मृत करा दिया है, जिस से वे सव ने सुपथ विपथ कुछ भी नहीं जाना है उस अनिर्वचनीय कृष्ण भाव की जय हो, अमरत्व को प्राप्त करे ।।४९।। अतुलनीयरसमय महिम विशिष्टा, शुद्ध महारति एवं माधुरी की सीमा त्रिभुवन प्रसिद्धा श्रीवृषभानुनन्दिनी राधा अपने उपवन में पधार चूकीहैं ।।५०।। निज निज वैभव ऐश्वर्य द्वारा चमत्कार कारि देह धारिणी पुरुषोत्तम के निखिल शक्तिगण दूरतर प्रदेश से ही दास्य रस की आशा करते हैं, अहो ! उन्होंने इस भाव में लुब्ध होकर परम सुख राशि को परिहास ही किया है ।।५१।। श्रीराधा शैशव से मुग्ध स्वभाव की थी, श्याम

सहज महाद्भुत हर्षेनुरागा संव्यवहारमात्र सविरागा ॥५२
स्वप्नेक्षित रमणात्मसमाधिः प्रलपित संजनितात्युपलब्धिः ।
क्षणमति कम्पा क्षणमति पुलका जड़वत् क्षणमाश्रितसख्यका ॥५३
विलसति नवधन आगतमूर्च्छा सभय सभयवीक्षित शिखिपिच्छा ।
क्षणमत्यर्त्त्या सुस्वर रुदिता क्षणमपि बहुशः क्षितितललुठिता ॥५४
क्षणमुत् सृजति सकलाभरणं क्षणमति गृह्णत्यालीचरणम् ।
क्षण मभिधाय यामि यमुनामितिनिगदति वाच्योऽसौ मम नम इति ॥५५
क्षणमुल्लसिता सहसोरुहसिता विततभुजोच्छायाश्लेषरता ।
क्षण मभिदधतीकृतकाकुनति धृष्टेऽपालि न लज्जय मेति ॥५६
माधव नामरूप गुण गानैश्चित्रपदादिष्वाकृतिलिखनैः ।
प्रतिमुहु रपि चाश्वासवचोभिः कथमपि यापितसमयालीभिः ॥५७

वस्तु को देखकर ही उन के देह व्याकुल हो जाता था, श्रीहरिके प्रति साहजिक महाद्भुत अनुराग एवं व्यवहारिक वस्तु के प्रति सम्यक् वैराग्य, अनासक्ति उनकी थी ॥५२॥ आपने स्वप्न में रमण श्रीकृष्ण के साथ निज मिलन स्वभाव एवं समाधि (नियम) को दर्शन किया प्रलापसे अतिशय उपलब्धि प्रकट हुई छन में अतिकम्प क्षण में अति पुलक कभी तो जड़ के समान सखी को पकड़ कर रह गई ॥५३॥ नवीन जलधर को देखकर मूर्च्छित होती है, भीत सन्त्रस्त होकर मयूर पुच्छ को देखती है, क्षण में ही अतिशय आर्त्ति से उच्चैःस्वर से रोती रहतीहै, क्षणके बाद ही पृथ्वीमें गिरकर लौट लगाती रहती है, ॥५४॥ क्षण क्षण में आभरणों को खोल कर फेंक देती है, छन में सखियों के चरण पकड़ती है, क्षण क्षण में मैं यमुना को जा रहीं हूँ, कहकर, उनको मेरा नमस्कार कहना यह कहती है ॥५५॥ छन छन में उल्लसित हो उठती है, सहसा जोर से हँस पड़ती है, अपनी छाया को भुजायों को बढ़ा कर दृढ़तर आलिङ्गन करती है। क्षण क्षण में काकुवाद प्रणति कर कहती है, हे धृष्ट ! सखी जन के समक्ष में मुझे लज्जित न करो ॥५६॥ माधव के नाम, रूप एवं गुण गान से चित्रपटादि में उनकी आकृति अङ्कन में प्रति मुहूर्त्त में सखीगण के

सा श्रुतिगत हरि मुरली सुकलाविकलाऽधावदुपेक्षित सकला ।
श्याम मिलन रस संभ्रम वलिता प्रति मुहुरुद्यत् पुलकैर्निचिता ।।५८
रस गरिमोज्ज्वल गौरवरक्षाकार विरचित वहुतर शिक्षा ।
वारितवत्यपि मन्मथविवशामालिस्तां धृतपाणिः सहसा ।।५६
तासु सकल गोकुल वनितासु प्रणय महासंभ्रम मिलितासु ।
प्रेक्षा न जीवौषध निज कान्तां प्रायहरिर्विरहा तुलचिन्तां ।।६०

श्रुत्वापि वेणुनिनदं स्वसखीजनेन
सम्मान रक्षण कृते वहुदत्त शिक्षा ।
राधासमागतवती न यदा तदेक
प्राणस्तदा हरिरभूद्गुरुदुःखचिन्तः ।।६१।।

दर्शित लोकवेद वहुभीतिः प्रिय विनिर्वर्त्तित युवतीविततिः ।
समवददत्यनुराग रसान्धा हरिपद कृत दृढ़जीव निवन्धा ।।६२

द्वारा प्रदत्त आश्वास वाणी को सुनतर ही काल यापन करती रहती है ।।५७।। श्रीहरि की मुरली की कलध्वनि कर्णरन्ध्र में प्रविष्ट होते ही अधीर होकर सव वाधा की उपेक्षा करके ही आपने अभिसार किया, श्याम के साथ मिलन रस से सम्भ्रम युक्त होकर प्रति मुहूर्त्त में ही उनके अङ्ग में पुलकावलि विकसित हो रही थी ।।५८।। रसका गुरुत्व एवं स्वकीय उज्ज्वल गौरव रक्षाके लिए सखियों ने उनको अनेक प्रकार शिक्षा भी दी, किन्तु सहसा ही उनको अभिसार में प्रवृत्त देखकर सखिनें उस काम विह्वल राधा का हात पकड़ लिया ।।५६।। यहाँपर प्रणय सम्भ्रमसे मिलित गोपी समाज में निज जीवातु रूपा कान्ता को न देखकर श्रीहरि विरह से अतुलनीय चिन्तान्वित हो गये ।।६०।। वेणुध्वनि को सुनकर भी निज सम्मान रक्षा केलिए सखीजन के द्वारा उपदेश प्राप्त करके भी जव श्री राधा सङ्केत स्थल में नहीं आई, तव राधागत प्राण श्रीहरि अतिशय दुःख से चिन्तित हो गये ।।६१।। प्रियतम श्रीकृष्णने लोक वेद मर्यादा लङ्घन से उत्पन्न भय का प्रदर्शन किया, और उनके साथ मिलित होनेके मना करदिया

विषमिव सकल विषय मपहाय त्वत्पदमाश्रितमतुलसुखाय।
प्रेष्ठतमाखिल मर्म कृपाणीं मा वद मावद निष्ठुरवाणीं ॥६३

सकलेन्द्रिय मनसामनिवृत्तिः प्रिय ! भवतैक हृताखिल वृत्तिः।
कोन्विह लोकः कः परलोकः क्व तदा स्मरणं क्वनु वा करणम् ॥६४

यद्यनिवृत्ति प्रविशति लोकः परमासह्य नरकमिकरौकम्।
कोऽपि तदपि किनु तव चरणाशां प्रत्यपि कुरुतेहन्त जिहासाम् ॥६५

तच्चरणाम्बुज मकरन्दाशा यद् हृदि समभूत् सहज विलासा ॥
दर्शय परम महाभय लोभानहहस्वात्मनि भवति विशोभा ॥६६

पति सुत गेह स्वजन धनाद्यं त्यक्तं वान्ता वदखिलमवद्यम्।
पुनरपि दुःसहमपि तत् स्मरणं तव यदि न कृपावरमिह मरणम् ॥६७

तव अनुराग से अन्ध प्राय, एवं श्रीहरि चरणों में निविड़ रूप से प्राण समर्पण कारिणी युवतीगण श्रीकृष्ण को कहने लगीं (६२) हे प्रेष्ठतम ! हमने सब विषयों को विष के समान त्यागकर निरुपम सुख के लिए तुम्हारे चरणाश्रय किया है, इस समय मर्मघातक निष्ठुर वाक्य मत बोलो मत बोलो !! ६३॥ हे प्रिय हमारे इन्द्रिय एवं मन की निवृत्ति किसी से नहीं होती है, कारण तुमने सब को हरणकर लिया है। हमारे इह लोक और परलोक ही क्या है, तब कहाँ किस का स्मरण, और कहाँ किसका करण, अर्थात इन्द्रियादि की चेष्टा कहाँ होगी ॥६४॥ यदि कोई व्यक्ति परम असह्य नरक समूह में निवृत्ति रहित होकर प्रवेश करता है, हाय ! तथापि क्या वह तुम्हारे चरण प्राप्ति की आशा को छोड़ सकेगा ॥६५॥ तुम्हारे चरण पद्म मधु प्राप्ति की आशा स्वाभाविक रूपसे हमारे हृदय में विराजित है, अब तुम महाभय एवं लोभ दिखाला रहे हो। अहो ! तुम्हारे निज, स्वभाव में यह आचरण बहुत ही विसदृश मालूम पड़ रहा है ॥६६॥ हमने पति पुत्र गृह स्वजन धनादि घृणित वस्तु को वान्तवत् (वमनके समान) ही त्याग किया है, पुनर्वार उसकी बातोंका स्मरण करने पर भी दुःख होता है। यदि तुम्हारी कृपा नहीं मिलती तब हमारे लिए मृत्यु ही श्रेयस्कर है ॥६७॥ तुम्हारे चरण रज से धन्य

त्वत्पद पङ्कज रजसा धन्ये त्यक्त्वा तनुमिह वृन्दारण्ये ।
प्राप्स्याम स्त्वां ध्रुवमभिरामं त्यज दुरवग्रहनागर कामम् ॥६८
प्रेमोत्कण्ठच सगद् गदमित्थं व्रजतरुणीमुख चन्द्रसमुत्थम् ।
पीत्वा वचन सुधा रस सारं राधापतिरिदमवददुदारम् ॥६९

चन्द्रावली प्रभृति सर्व विदग्ध गोपी
वृन्देऽपि संमिलितवत्यति मन्मथान्धे ।
श्रीराधिका विरहदीन उपेक्ष्य पूर्वम्
पश्चादनन्य विषयान्ययुनक् प्रियार्थे ॥७०

अति निर्भरतर मद्भाववती र्नाहमुपेक्षेकथमपिभवतीः ।
किन्तु विना मम जीवन राधां कृन्तति किमपि च नान्तर वाधाम् ॥७१
तद्दयिता रचयत वहुयत्नं सा मम कण्ठविभुषणरत्नम् ।
मिलति यथा न चिरेण भवत्यः साधु तथा विदधत्वतिमत्यः ॥७२

इस वृन्दावनमें देहत्याग करके निश्चय ही अभिराम रमण तुमको हम सव प्राप्त करेंगे। हे नागर! हे दुरवग्रह! 'मनोरथ परि पूरण में प्रतिवन्ध दाता' तुम इस को छोड़ो ॥६८॥ व्रजाङ्गणा के मुख चन्द्रनिर्गलित इस प्रकार प्रेमोत्कण्ठा जनित गद्गद् वाणी रूप मनोरम सुधारस निर्यास को पानकर श्रीराधा नायक कहने लगे ॥६९॥ चन्द्रावली प्रभृति सर्व विदग्ध गोपीवृन्द सम्मिलित होने पर भी श्री राधिका के विरह कामरस से अतिशय अन्ध दीनचित्त श्रीकृष्ण ने पहले उन सव की अपेक्षा की पीछे उनसव को अनन्य जानकर प्रियतमा के लिए विनियोग किया ॥७०॥ तुम सवने मेरे साथ दृढ़तम प्रेम किया है, अतएव मैं किसी प्रकार से भी तुम सव की उपेक्षा नहीं कर सकता हूँ। किन्तु मेरा जीवन स्वरूप राधा को छोड़कर मेरे हृदय पीड़ा की शान्ति किसी प्रकार से नहीं हो रही है ॥७१ अतएव! हे दयितागण! तुम सव महामति हो, वहुविध प्रयत्न करो, जिस से अचिरकाल में ही वह राधा मेरे कण्ठ की भूषणमणि हो जाय ॥७२॥ अनन्तर श्रीकृष्ण ने अति आनन्दित व्रज वालागण

अथ स विचार्य व्रजवनिताभिः कापिनिपुणमतिनुदिताभिः ।
प्रहिता द्रुतमुपवन गत राधां समुपेत्याह वलत्स्मरवाधाम् ॥७३

श्रीवृषभानु भवन मणिमञ्जरि राधे ! जन नयनामृत लहरि !
क्वापि न लोके क्वापि तुला ते व्रजजन भाग्यात् परमिह जाते ॥७४

अयि मयि कृपयाऽपाङ्ग मुदञ्चय सेश्वर विश्वं मद्वशतां नय ।
स्नेहावेश गलज्जल नयने ! क्षणमवधानं कुरु ममवचने ॥७५

परमरसे तव यदपि निमग्नं क्वचिदपि भवतिमनोनहि लग्नम् ।
तदपि महाकरुणार्द्र प्रकृते ! श्रवणं देहि मनाङ् ममगदिते ॥७६

एकः श्यामलदिव्य किशोरः श्रीश प्रमुख मनोमणि चोरः ।
अस्ति व्रजवृन्दावन सेवी तं लभते कापि न देवी ॥७७

कलादिक वरतरुणीवृन्दैः सतत विमृग्यः कृतनिरबन्धै :
स तव पदाम्वुज परिमल लुब्धः षट्पदइव विभ्राम्यतिमुग्धः ॥७८

के साथ पशमर्श करके एक सुनिपुणा गोपी को दूती वनाकर राधाके पास भेज दिया, वह गोपी द्रुतगति से उपवन स्थित राधा के समीप में जाकर, उनको काम पीड़ा से अधीरा देखकर कहने लगी ॥७३॥ हे वृषभानु राज भवन की मणि मञ्जरि ! हे श्रीराधे ! हे जनगण नयनामृत लहरि ! चतुर्दश भुवन में कहीं पर तुम्हारी उपमा नहीं है किन्तु व्रज जगगण के भाग्य से ही तुमने यहांपर जन्म लिया है ॥७४ अयि राधे ! कृपाकर के मेरे प्रति एकवार अपाङ्ग निक्षेप करो । एवं लोक पालगण के साथ समग्र विश्व को वाध्य करो । स्नेहावेश से तुम्हारे नयन से अश्रुधारा विगलित हो रही है, हे राधे । क्षणकाल के लिए मेरा वाक्य में मनोनिवेश करो ॥७५॥ हे परम रस रूपे । यद्यपि तुम्हारा मन कहींपर नहीं लगरहा है, किसी परम रस में निमज्जित नहीं होताहै, तथापि हे महा करुणार्द्रचित्ते ! एकवार मेरी वात को सुनो ॥७६॥ लक्ष्मी पति प्रभृति सव के मनोमणि चोर एक श्यामल दिव्य किशोर है, आप व्रज विपिन का ही सेवक हैं, कोई मी देवी उनको प्राप्त करने में समर्थ नहीं हैं ॥७७॥ लक्ष्मी प्रभृति महा तरुणी वृन्द, निर्वन्ध के साथ सतत् उनका सङ्ग को ढुंढ़ती रहतीं हैं,

राधे ! तस्यतुतत्त्व रहस्यं त्वच्छ्रुति मूलेऽस्यमवश्यम् ।
यत् केनापि कदापि मनागपि ना दृश्यत पराभवदृशापि ॥७९॥
केवल काम रसात्मक एष केवल मधुर किशोरक वेषः ।
केवल गोप युवति रति तृष्णः परमधुरिम्णा नाम्ना कृष्णः ॥८०
काममपि गोपीर्मपि कामयते न खलु रमाद्यारमणीर्मनुते ।
गोकुल मखिलमसौ दिन रजनी र्विचिनोतिक्वनु का नव रमणी ॥८१
वलतश्छलतोरन्यैरपि योगैः साधितगोपवधूसंभोगैः ।
निरवधि कामाम्भोधेःपारं गच्छन्नस्ति कश्च एवारम् ॥८२
तत्र तु स्निग्धजनानुग्रहतस्तस्या कारान्तरमपि दधतः ।
प्राप्य रहसि नव तरुणी निकटं तन्निज रूप मुदैक्षिप्रकटम् ॥८३
किं वहुनागरीतै स्तस्याप्यैक्षिशिशुत्वानुकृतेः ।

किन्तु प्राप्त नहीं होते हैं। वह किशोर मणि तुम्हारे पाद पद्म की परिमल से लुब्ध भ्रमरकी भाँति अति मुग्धचित्त से इधर उधर भ्रमण कर रहें हैं, अथवा विभ्रम ग्रस्त है ॥७८॥ हे राधे ! उनके तत्त्व, तुम्हारे कर्ण मूल में अवश्य ही निवेदनीय है, अहो ! परभाव दर्शन कारी, कैवल्य अथवा मुक्ति धामनिरीक्षक, अत्युत्कृष्ट भाव पर्यवेक्षक, कोई भी महाजन कभी भी विन्दु मात्र भी उसतत्त्व का अनुभव नहीं कर कर पाये हैं ॥७९॥ आप केवल काम रस स्वभाव, केवल मधुर किशोर वेश, एवं केवल गोपीगण की रति तृष्ण रति लम्पट हैं। उनका परम मधुर नाम ही श्रीकृष्ण है ॥८०॥ आप जिस किसी गोपी को चाहतेहैं, किन्तु लक्ष्मी प्रभृति सुन्दरी गण को कभी भी मन में स्थान ही नहीं देते हैं, दिनरात समग्र गोकुल मे घूमधुम कर देखते हैं, कहाँपर कौन नव युवति है ॥८१॥ बल से और छल से एवं अन्यान्य उपायों से कौनव्यक्ति ऐसाहै जो गोपवधूगणके साथ निरन्तर सम्भोग क्रीड़ा करके कामसमुद्र का पार में यथेच्छगमन करने में समर्थ हुआ है ? ॥८२॥ स्निग्ध सखीजन की कृपाप्राप्त करने के लिए, एवं कभी तो अन्य रूप धारण कर निर्जन में नव तरुणी के समक्ष में आकर निज रूप प्रकट करने के लिए भी इन को देखा गया है ॥८३

गोप्योत् सङ्गेऽधररसलौल्यं कुच कोरकमनु करचाञ्चल्यम् ।।८४
स हि नव किशोरीदर्शं व्रजवीथ्यादिष्वकृत विमर्शम् ।
लुञ्चित कञ्चुक कुचयुगर्दः श्लिष्यति चुम्बतिसहसामत्तः ।।८५
सुतयामिलति मिलत्यपि वध्वामिलतिभगिन्याप्यथपथिरुद्धा ।
तदपि महामोहन वदनेक्षा स्थगिततस्थू र्वल्लवमुख्याः ।।८६
काश्चिद् वशयति काम कलाभिः का अपिनृत्यगीत विद्याभिः ।
काश्चन तरली कुरुते मुरली वादनखुरलीभिर्वनमाली ।।८७
काश्चन तत्पति वेशविनोदैः काश्चिद्ग्रहभीत्याद्यपनोदैः ।
काश्चन दूतिकया बहुमानैः काश्चिद् वंशीहारण धरणैः ।।८८
काश्चित् स्वयमनुनयनैर्धन्या द्यु त जितास्तत् पतित स्त्वन्याः ।
आकर्षति काश्चन मन्त्राद्यैः काश्चन चीरहार हरणाद्यैः ।।८९

अधिक क्या कहें ? शिशुत्व का अनुकरण कर (अर्थात् स्वभाव में किशोर होकर भी वयस में शिशुरूप धारण कर) बहुविध नागर कला वित् कृष्ण गोपीजन गणके क्रोड़देश में अवस्थान करते हैं, एवं उनके अधर सुधापान के लिए चाञ्चल्य प्रकट करते हैं। एवं कुच कोरक स्पर्श के लिए भी हात को चञ्चल करते हैं ।।८४।। व्रज के पथ में नव किशोरी को देखकर ही कुछ भी न सोचकर कञ्चुक अपसारण प्रभृति करते रहते हैं, सहसा मत्त होकर आलिङ्गन चुम्बनादि करते रहते हैं ।।८५।। किसी की कन्या के साथ, वधू के साथ भगिनी के साथ मिलन लीला करते रहते हैं। श्रेष्ठ गोपगण इनका पथरोध करने पर भी इनका महामोहन वदन को देखकर सब मुग्ध हो जाते हैं ।।८६।। वन माली किसी को काम कलादि के द्वारा किसी को नृत्यगीतादि के द्वारा वशीभूत करतेहैं और किसी को मुरलीवादन रूप शराघात से चञ्चलायित करते हैं ।।८७।। किसी किसी रमणी को पति वेश धारण कर आनन्द देते हैं, किसी का ग्रहभय विदूरित करते हैं, किसी को दूतीद्वारा दानमान प्रदान करते हैं, एवं अपरापर गोपीगण को वंशी वादन द्वारा वशीभूत करते हैं ।।८८।। किसी को अनुनय करके, किसी को द्यूत क्रीड़ा से किसी को मन्त्रादि के द्वारा,

वनभुवि पुष्पावचयन सक्ताः काश्चन चौर्य्यारोपाद् भुक्ताः ।
अन्याश्चित्रेक्षण कुतुकेन भीषण जन्तुरूप भजनेन ॥९०

देवनटी रूपाचरणेन मोहयतीन्द्र जाल रचनेन ।
अन्या स नयन् यमुनापारं रतिमेवातरमात्तोदारम् ॥९१॥

गोकुल कुलज वधूटि कया सह न कथा सङ्गतिरस्यवभूव ह ।
उन्मद मदन रसैक प्रकृते स्तदपि मनोऽस्य न निवृ तिमयते ॥९२

स कदाचिन्नव वृन्दाविपिनं प्राविशेदेकः स्मररसः सदनम् ।
क्वापि कदम्बतले स्मरखिन्नः सुप्तस्तत् प्रशमन निर्विण्णः ॥९३

स्वप्ने दर्शनमस्य त्वमगा लीलाखेल पराद्भुतरसदा ।
किमपि च लज्जानत वदना सा गदित वतीमधुरंसविलासा ॥९४

किं कथये त्वां जीवितनाथ ! राधात्वत् प्रेमैव ननाथ ।
त्वन्तु व्रजयुवतीभि विहरसि मां निजकान्तां नैव स्मरसि ॥९५

वश कर, किसी के वस्त्र हार प्रभृति की चोरी करके सम्भोग करते हैं ॥८९॥ वन प्रदेश में किसी गोपी को पुष्प चयन में आसक्त देख कर कृष्ण उसको चोर अपवाद देकर, और किसी की विचित्र जन्तु दिखाकर भय उत्पन्न करके सम्भोग करते हैं ॥९०॥ कभी तो देव नटी का रूप धारण कर इन्द्र जालविद्या से किसी को मुग्ध करते हैं, किसी को यमुनापार करने के लिए नाव और नाविक वनकर किराय भाड़ा मांगते रहते हैं ॥९१॥ किस गोकुल वाला के साथ कृष्ण का सङ्गम नहीं हुआ है ? किन्तु उन्मद मदन रस स्वभाव कृष्ण का मन परम शान्ति प्राप्ति नहीं किया है ॥९२॥ किसी एक समय में श्रीकृष्ण अकेला ही स्मररस मन्दिर नव वृन्दावन में प्रवेश किए थे, कामशर से खेदान्वित एवं उसका प्रशमन के लिए निर्वेद युक्त होकर किसी कदम की नीचे सो गए थे ॥९३॥ लीला विलास परायण, अद्भुत रसदायिक तुमने उनके स्वप्नके मध्य में उदित होकर लज्जा नम्रवदन और विलास भङ्गी से सुमधुर स्वर से उनको कहा था ।९४ हे प्राण नाथ ! मैं और क्या कहूँगी ? राधा तुम्हारे पास प्रेमभिक्षा कर रही हैं । तुम तो व्रज युवतीगण के साथ विलास कर रहे हो,

इत्याकर्ण्य परम रससारं त्वद् वचनामृतमसमोदारम् ।
यावत् पुरुदन् पदयोः पतित तावज्जागरितीभुविलुठति ॥९६
तदवधि परमाविष्टः स युवा व्रजनथ वृन्दावन मन्यद्वा ।
राधाराधेत्यविरत जापः प्राटति राधाध्याय्युरुतापः ॥९७
प्रथमोद्देशं तव सुसखीतः श्रुत्वातद्भावं च प्रतीतः, ।
अन्योपायै र्मिलनमपश्यन् वंगुरवै स्त्वाह्वयदति हृष्यन् ॥९८
तांतु महामोहनमुरलीध्वनि माकर्ण्यैव लोकनिगमाध्वनि ।
दृढ़तर हेयधियो व्रजवनिता आययुरस्यान्तिकमपि न मताः ॥९९
अपि न कटाक्ष निरीक्षण मासु त्वत् प्रणयी कुरुतेऽनुरतासु ।
अनिशम्यैवाद्भुत रसभावं खिन्नं स्त्वत् पदनूपुररावम् ॥१००
पश्यन्नपि स न पश्यति किञ्चित् शृण्वन्नपि न शृणोति स किञ्चित् ।

निज प्रेयसी मुझ को स्मरण ही नहीं करते हो ॥९५॥ परम रस निर्यास रूप तुम्हारे इस अतुलनीय मनोहर वाक्यामृतको श्रवण द्वारा पानकरके जब श्रीकृष्ण जोर जोर से रो रो कर तुम्हारे पैर में गिर गए थे, उसी समय नींद टूट जाने पर जागकर भूमि में लौट लगाने लगगए ॥९६॥ उसी समय से हीं वह युवा किशोर परमाविष्ट होकर व्रज में वृन्दावन में एवं अन्यत्र 'राधा' 'राधा' नाम अविरत जप करते करते घूम रह हैं ॥९७॥ तुम्हारी किसी प्राण प्रिया सखी के समीप में तुम्हारा प्रथमोद्देश प्राप्त कर एवं भाव को अनुभव कर आपने निश्चय किया कि अन्य उपाय से मिलन होना असम्भव है, अतएव आनन्द चित्त से वेणु ध्वनि से ही तुम्हें बुलाने का प्रयत्न वह कर रहें हैं ॥९८॥ वह मनो मोहन की मुरली ध्वनि को सुनकर ही लोक मार्ग में और वेद मार्ग में दृढ़तर हेयबुद्धि स्थापन कर व्रजवाला गण उनके निकट आगए हैं, किन्तु श्रीकृष्णने तो उन सब को कुछ भी आदर नहीं किया ॥९९॥ तुम्हारे प्रणयी ने उस अनुरक्त सबला गण के प्रति कटाक्षपात भी नहीं किया। कारण वह अद्भुत रस भाव जनक तुम्हारे पद नूपुर की ध्वनि को न सुनकर खिन्न हुआ है ॥१००॥ आप कुछ देखकर भी नहीं देखरहे हैं, सुनकर भी नहीं सुन

त्वामनु चिन्तयते व्रजनाथः सन्तत विहित त्वद्गुणगाथः ॥१०१
क्वासि प्रेयसि ! हा हा राधे ! मय्यनु कम्पां कुरुपुरुबाधे ।
स्मृत्वा मामुपयाहि त्वरितं वृन्दाविपिनं कुरुसुख भरितम् ॥१०२
अथवा सहज सुख वत्सल हृदये नायास्यसि कथमनुगत सदये ।
तिष्ठसि कुञ्ज क्वापिनिलीना रीतिरियं तव सुरस धुरीणा ।१०३
एवं प्रलपति वहुधा कृष्णस्त्वत् सङ्गम रसमात्र सतृष्णः ।
त्वामुपनीय ध्यानात् पुरतः स भवति रसमय चेष्टानिरतः ।१०४
चन्द्रावल्याद्यखिलमनोज्ञ व्रजवर रामा अपि स रसज्ञः ।
कृतचाटूक्तीः पश्यति न दृशा श्वसिति परं तव रतिरस सुतृषा ॥१०५
नान्य तरुण्या वार्त्ताः कुरुते नान्यादत्तं पिवति न भुङ्क्ते ।
अन्या स्पर्शन दर्शन विरुचि स्त्वत्परतायामास्ते स शुचिः ।१०६

रहे हैं, अर्थात् उस उस विषयों में मनोनिवेश नहीं करते हैं, वह व्रज नाथ केवल आपकी चिन्ता में मग्न हैं, और निरन्तर आप की गुण गाथा का कीर्त्तन करते रहते हैं ॥१०१॥ हे प्रेयसि ! राधे ! तुम कहाँ हो ? तुम्हारी वहुत वाधा विपत्ति है, मैं जानता हूँ, तथापि कृपाकरो ! मुझे स्मरण कर एकवार शीघ्र वृन्दावन में आकर सवको सुख पूर्ण करो ॥१०२॥ अथवा तुम तो सदा ही स्निग्ध हृदय के हो, तुम तो मादृश अनुगत जन के प्रति सदा ही सदय हो, व्रज विपिन में क्यों नहीं आओगी ? मैं समझ गया हूँ, तुम किसी कुञ्ज में छिप कर रहो, तुम्हारी रीति सुन्दर तो है ही, रसमयी भी है ॥१०३॥ इस प्रकार तुम्हारे सहित सङ्गम रस में तृष्णा शील कृष्णचन्द्र वहुशः प्रलाप करते रहते हैं, ध्यान से तुम्हें सम्मुखीन कर आप रसमयचेष्टा में डूवे हुये हैं ॥१०४॥ चन्द्रावली प्रभृति निखिल मनोज्ञ युवति गण अनेकानेक प्रिय वचन कहने पर भी रसज्ञ कृष्ण उनसव को आख उठाकर भी नहीं देख रहें हैं। वरं तुम्हारे साथ रति पिपासु होकर लम्बी श्वास ही ले रहे हैं ॥१०५॥ अन्य किसी भी रमणी की वात नहीं सुनते हैं, दूसरे से दी हुई भोजन पान की सामग्री को ग्रहण नहीं कर रहे हैं। अन्यान्य गोपीयों के दर्शन, स्पर्शन, में उनकी वड़ी

विलपत्यति करुणं तव वन्धु र्धृतवाष्पौधो युवति सुखेन्दुः ।
स्थिरचर सत्त्वान्यपि चक्रन्दुर्वृन्दा विपिनमश्रु जल सिन्धु ॥१०७

शोषं नेष्यति हरिवपुरुष्मा तववृन्दावनमथरुचिराश्मा ।
केलिगिरि रते द्रवतां यायात् प्लावितमखिलं वाश्रैर्भूयात् ।१०८

सकलं श्रीमद् वृन्दाविपिनं सकलं गोकुलमपि च व्यसनं ।
परम दुरन्तमद्य समुपैति सकल प्राणधने परिषीदति ॥१०९

तदुरुनितम्बे न कुरु विलम्बं चल सखि ! कृतमत् पाण्यवलम्बम्
मदकल कादम्बक निकुरम्बं तव गति भङ्ग्या भजतुविड़म्बम् ।११०

अथदुर्धरतर मन्मथ वाधा किमपि गदितुमशकन्नहि राधा ।
तद्दयितालि र्बहुरस वलिता गिरमति ललिता मवदल्ललिता ॥१११

चल सुन्दरि ! किं वहुवचनेन वयमति तृप्ताः कृष्णगुणेन ।
यैरनुभूतं तस्य न चरितं तच्छ्रवणं कुरु तद्गुणभरितम् ॥११२

अरुचि हो गईहै, किन्तु तुम्हारे प्रति एकान्त निष्ठा को प्रकटकर परम पवित्र हो गये हैं ॥१०६॥ तुम्हारे वन्धु, अति करुण स्वर से विलाप कर रहा है, हे युवति राधे ! उनका मुख वाष्प धारा से नहा रहाहै, स्थावर, जङ्गम प्राणी निचयों के रोदन से वृन्दावन आसूयों का सागर वन गया है, ॥१०७॥ श्रीहरि का देह ताप सब वृन्दावन को सुखा देगा, और मनोज्ञ प्रस्तर खण्ड शोभित तुम्हारे केलि गिरि-गोवर्द्धन पर्वतभी पिघल जावेगा, अथवा सब व्रजमण्डल आसुँयों की वाढ़ के चपेट में आजायेगा, ॥१०८॥ सब के प्राणधन श्रीकृष्ण विषण्ण होनेपर आज समग्र वृन्दावन समग्र गोकुल परम दुरन्त विपदा क्रान्त हैं ॥१०९॥ अतएव हे गुरुनितम्बिनि ! और देरी मत करो । हे सखि ! मेरा हात पकड़ कर अभी चलो, तुम्हारी गति भङ्गी को देखकर मदकल कलहँस निचय विड़म्बना को प्राप्त करके लज्जित हो जाय ॥११०॥ अनन्तर दुःसहतर मन्मथ पीड़ा से आक्रान्त होकर श्रीराधा कुछ भी कहनहीं सकी । तव उनकी प्रियसखी प्रिय सहचरी वहुरसमयी ललिता अति ललित मनोज्ञ वाक्य से वोली ॥१११॥ हे सुन्दरी ! अभी ही इस स्थान को छोड़ो । वात्त करने की आवश्यकता

वक्रिमशालि श्यामल वपुषः का ऽऽस्था ऋजु शुचितायांमनसः।
कृत्रिम एव प्रेमविकार स्तस्यमृषा वा त्वद् व्याहारः ॥११३
पश्य दूति ! वहु वल्लभ एष व्रज पुरत तरुणी मोहनवेशः।
वेणु ध्वनि हृतगोपीवृन्दः कथमिह सख्या मम सुखगन्धः ॥११४
मनुते यदि दयिता गणमुख्यां स मम सखीं निज परभाभिख्याम् ।
तत् कथमादौ न तया मिलितः प्राप्तानुज्ञोऽन्याभिर्न युतः ॥११५
तदलमलं कपटैक परेण प्रकटित मिथ्याप्रेम भरेण ।
तेन दिनद्वयमेकी भवता पुनरथ परमौदास्यं भजता:११६
किञ्चास्माकं कण्ठ गतेषु प्राणेष्वन्यां व्रजवरतनुषु ।
राधाभर्त्ता कथमिव शयनं नेष्यति धन्यामपि कृतकरुणम् ॥११७
तत् लक्ष्मीपति मोहन्यपि का व्रजभुव्यस्मत् सख्यनुचरिका ।
भवितु योग्या सह तत् पतिना यानिर्लज्जा कृतिरति कलना ।११८

क्या है ? हम सव कृष्ण गुण से अच्छीतरह सुतृप्त हैं, उनके चरित्र का अनुभव जिनका नहीं हैं, उनके कान में ही कृष्ण गुण गान करवाओ ॥११२॥ त्रिभङ्ग भङ्गिम श्यामल सुन्दर के मन की सरलता और पवित्रता में क्या विश्वास है ? उनका प्रेम विकार कृत्तिम हो सकता है, अथवा तुम्हारा कहना झूट है ॥११३॥ देखो दूति ! कृष्ण वहु वल्लभ है, उनका वेश भी गोकुल युवतियों को मुग्ध करने वाला है, उन्होंने वेणुध्वनि से तो गोपीगण को ही आकर्षण किया है। इस से मेरी सखी कैसे सुखी हो सकती है ॥११४॥ यदि मेरी सखी को प्रियागण मुख्या मानते हैं, परम शोभा विधायिनी, कीर्त्तिदायिनी मानते हैं तव पहले इनके साथ क्यों नहीं मिला, अथवा इनका आदेश क्यों नहीं लिया गोपी सङ्ग करने के लिए ? ॥११५॥ अतएव उस परम कपट शिरोमणियोंके साथ, मित्थाप्रेम प्रकट करनेवाले के साथ सम्पर्क स्थापन करना हम नहीं चाहते हैं, उस से कोई लाभ नहीं है अहो, वह तो दो दिन राधा से मिलेगा इस के वाद ही उदासीनहो जावेगा ॥११६॥ दूसरी वात है, हमारे प्राण कण्ठ गत होने पर भी श्रीराधारमण,व्रज की दूसरी नारी को अपनी सेज में लेजातेहैं ।११७

गत्वा सर्वमिदंत्वं वर्णय कामुक मुकुटमणिं सखि ! सुखय !
स सुखं विहरतु सहवहुराम स्तादृश निकटं न वयं यामः ॥११६
क्रीड़ति स वहु कपट नाटिक या मुग्धव्रजपुर युवतीघटया ।
सुमुखि ! वयन्त्वनुरागमनन्यं विभ्रतमेव भजामो धन्यम् ॥१२०
राधैकान्तिकभावो न भवेत् स यदि तदास्यां सङ्गति विभवे
अस्तु निराशो भमतु सखीयं तादृशहृद् गमयतुसमयम् ॥१२१
तत आगत्य तथा परि कथिते सकले राधालीजनलपिते ।
गोपीवेशस्थगित समाजः स्वयमचलच्छीव्रजयुवराजः ॥१२२

दूतीगिरापि च यदा वृषभानु पुत्री
नैवागता रसविलासविधौ विदग्धा ।
गत्वा तदा स्वयमसौ युवती सुवेश
स्त्वां प्रेमविह्वलतनुं हरि रानिनाय ॥१२३॥

व्रजवन में ऐसा कौन नारी है, लक्ष्मी ही चाहे श्रीनारायण की छाती में रहने वाली हो, मेरी सखी की अनुचरी हो सकती है ? वह नारी निर्लज्ज है, इसलिए कृष्ण के साथ उसने सुरत क्रीड़ा की है ॥११८॥ सखि ! तुम कामुक चूड़ामणिके पास जाकर यह सव कह कर उनको सुखी करो । वह वहुकान्ता लेकर सुखी वने, हम सव उस कपट शिरो मणिके पास नहीं जाऊँगी॥११६॥वह वहु कपटता करके व्रजवधूयोंके साथ विहार करता है, हम सव एकान्त अनुरागी धन्य प्रेमिक जनका ही भजन करूंगी ॥१२०॥ यदि आप श्रीराधा में अनन्यनिष्ठा नहीं रखते हैं तो इस के साथ सङ्गम की आशा छोड़ ही दें। और मेरी सखी भी उक्त प्रकार रति को हृदय में रखकर कालयापन करें ॥१२१॥ अनन्तर दूती लौट आई और सखी की वात को कहदी, तव व्रजराज स्वयं युवतिवनकर नारी समाज को विस्मित करके राधाके और चलदिये ॥१२२॥ जव रसकला विदग्धा वृषभानु-नन्दिनी दूतीवाक्य को सुनकर भी श्याम सुन्दर के पास नहीं आई, तव श्रीकृष्ण युवति का सुन्दर वेश धारण कर उस प्रेमोन्मत्ता राधा

द्रुतमिव स गतो राधारामं तद्गुण चरितैः परमाभिरामम् ।
शिरसि निहित तच्चरण परागः प्राह ललितमतिवलदनुरागः ॥१२४
अहह ! महाद्भुतभाग विपाके तत्पदमति दुर्लभमपिनाके ।
अद्य दृशाति तृषा परिदृष्टं स्पृष्टं जनिफल मखिलं जुष्टम् ॥१२५
तव पद पङ्कज नखमणि चन्द्र ज्योतिः प्रसराद्दिशिदिशिसान्द्रः ।
स्वानन्दामृत सिन्धुरपारः स्यन्दत एवाद्भुत रससारः ॥१२६
आश्चर्या ते रूप चमत् कृति राश्चर्या ते रुचिरुच्छलति ।
आश्चर्या ते मधुर वयः श्रीर्लास्यै हॅरिरपि मूर्छति स श्रीः ॥१२७
जन्मनि जन्मनि दास्याअपि ते दास्य पदाशां का न हि कुरुते ।
आस्तामपरं श्याम रसोपि त्वत्पदकमले लभ्यः कोऽपि ॥१२८
कोऽयमहो मम भाग विशेषः बलितो गलित स्तर्कोऽशेषः ।
यदिह मया गतया हरि कार्ये प्रापि परश्चिन्तामणिरार्ये ॥१२९

को रास मण्डलमें ले आए ॥१२३॥ और श्रीराधाके गुण चरितादि को गाते गाते परम रमणीय श्रीराधिका की कुन्ज वाटिका में पहुँच गये, एवं श्रीराधा के चरण धूली माथे में लेकर प्रबल अनुराग से मिठी मिठी वाणी से बोलने लगे ॥१२४॥ अहो ! आज महा अद्भुत भाग्य से स्वर्ग में दुर्लभ तुम्हारे चरण कमल को पिपासित नयन से दर्शन कर स्पर्श किया, निखिल जन्म का फल आज ही करतल गत हुआ । ॥१२५॥ तुम्हारे पादपद्म के नखमणि चन्द्र समूह की ज्योति से सब और निविड़ अद्भुत रस निर्यासमय अपारावार स्वानन्दामृत सिन्धु प्रवाहित हो रहा है ॥१२६॥ आश्चर्य तुम्हारे रूप चमत्कृति आश्चर्य है, तुम्हारे कान्ति कन्दली का प्रसरण, आश्चर्य है, तुम्हारे मधुर वयस की शोभा समृद्धि, अहो तुम्हारे नृत्यसे लक्ष्मीके साथ नारायण भी मूर्च्छित होतेहैं । अथवा परम मनोज्ञ हरि श्यामसुन्दर भी तुम्हारे भावाश्रय नृत्य को देखकर मुग्ध होते हैं।।१२७। अहो ! कोन रमणी ऐसी होगी, जो जनम जनम में तुम्हारी दासी का दास्य प्राप्त करने को इच्छा नहीं करेगी ? अधिक और क्या कहूँ-उज्ज्वल श्यामरस भी तुम्हारे चरण कमल से ही मिलता है ॥१२८। अहो ! मेरा कैसा

रमयाप्यतिदुर्लभपदरजसां मृग्यो निरवधि गोकुल सुदृशाम् ।
वृन्दावन विधुरपि तवदासी भागकलाया श्चिरमभिलाषी ।१३०
नापेक्षा मम मोहन राजे तद्धित हेतोः कृतिमपि न भजे ।
यन्मे त्वत् सङ्गादन्यदकाम्यं तदपितदुक्तं कथये रम्यम् ।।१३१
अयि वर सुन्दरि नागरि राधे ! कुरु हरिवचने हृदयमवाधे ।
यन्मम मुखतः श्रवण पुटेन स्वदितं त्वां वशयेत रसेन ।।१३२।।
पयस इव द्रव भावः सहजः प्रणय महोघ स्तव मयि सुनिजः ।
सुमुखि ! तदद्य किमेव मसारं मयि कुरुषे गुणदोषबिचारम् ।।१३३
तव रस पुष्टि कृते व्रजरामा मुरलिरवेण हृता अभिरामाः ।
तत्र वृथा किमुद् घटय दोषं भवतु प्राणेश्वरि ! भज तोषम् ।१३४

भाग्य फलीभूत हुआ, मेरा अशेष संशय आज मिटगया हे आर्ये ! हे सरले ! मैं हरि की सेवाके लिए जा रही थी, यहाँपर कैसे चिन्तामणि मिल गई ।।१२९।। गोकुल युवति गण के दुर्लभ पादरज की कामना स्वयं लक्ष्मी भी करती है। अधिक क्या कहूँ ? वृन्दावन चन्द्रभी तुम्हारी दासी की सौभाग्य कला की अभिलाषी हैं ।।१३०।। उस मोहनराज के प्रति किसी प्रकार अपेक्षा प्रीति, आकाङ्क्षा नहीं है, और उनके हितके लिये भी किसी प्रकार यत्न नहीं करतीहूँ। कारण तुम्हारे सङ्ग से मेरी दूसरी किसी वस्तु की आकाङ्क्षा नहीं है, तथापि श्री हरिने जो कुछ कहाहै, उस रमणीय कथा को कहती हूँ ।।१३१।। अयि वराङ्गने नागरि राधे ! हृदय की पीड़ा नाशक हरि कथा में मनोनिवेश करो, कारण मेरे मुख से निःसृत कथा का आस्वादन श्रवण पुट से करने पर कथा तुम्हें रस मयी करेगी ।।१३२ जलका जिस प्रकार स्वाभाविक द्रवीभाव है, उस प्रकार मेरे प्रति तुम्हारे प्रणयातिशय्य भी अतिनित्य है। हे सुमुखि ! तब क्यों आज वृथा मेरा गुण दोष विचारने में लगीं हो ।।१३३।। तुम्हारे रस पोषण के लिए ही अभिरमणीय व्रजरमणी गण का आह्वान मुरली ध्वनि से मैंने किया है। उस से क्यों तुम दोषोद्घाटन कर रही हो ? हे प्राणेश्वरि ! जो कुछ होने का है, वह तो हो चूका है, अब सन्तुष्ट हो

गोप किशोर्य स्त्वद् भ्रम भुक्ताः काश्चन थुत् कृत्याथ त्यक्ताः।
श्रुत्वा काश्चिदनुत्तमरूपा स्त्यक्ता अनुभूयाननुरूपाः ॥१३५
अन्या दशपञ्चैकोसूय क्षितह्रियोमां रह आनीय।
पाणौ पीतपटे वा धृत्वा मत्ताः सकृदधरमधुपीत्वा ॥१३६
एका कापि तवास्ते योग्या व्रज इति दूतीजन वाग् भङ्गया।
काचन काचन भुक्त्वा त्यक्ता साम्प्रतमत्र वयं सुविरक्ताः १३७
हरि हरि काममहाम्बुधिपारं कावा नेष्यति मां सविकारम्।
स्थितवानेव महर्निश मन्त श्चिन्तातितिमिमिलन्निजकान्तः ॥१३८
त्वद्वनमध्यसुप्तमति विधुर त्वं मा बोधितवत्यसि मधुरम्।
स्वात्मानं श्रीराधानाम्नीं प्रकटित मच्चिन्तातिग धाम्नीम् ॥१३९
स्वप्ने जागरणे वा प्रेयसि ! पूर्वमपि त्वं हृदि मे स्फुरसि।
वहिरिदमनुपलभ्य तव रूपं वंभ्रमामि कृतमिथ्यारोपम् ॥१४०

जाओ ॥१३४॥ किसी किसी गोप रमणी को जो मैंने सम्भोग किया वह भ्रम से ही हुआ है, तुम्हीं हो ऐसी प्रतीति मेरी हुई थी। किसी को थुत्कार से त्याग किया है, किसी का रूप की कथा सुनकर भी उसको असदृश मान कर त्याग किया है ॥१३५॥ अपरापर दश पाच रमणी मिलकर निर्लज्ज होकर मेरा हात व पीतपट पकड़ कर एकान्त स्थान में मुझ को ले जाकर एक वार मात्र मेरी अधर सुधा पान कर वे सव उन्मत्ता हो गईं हैं ॥१३६॥ हे नागर ! इस व्रजमें एक ही रमणी है, वह ही तुम्हारी योग्या है, दुती की उस वात से किसी किसी गोपी को सम्भोग करके ही छोड़दिया है, अव में इस विषय में अतिशय विरक्त ही होगयाहूँ ॥१३७॥ हरि हरि ! विकार ग्रस्त मुझ को कौन व्यक्ति काम समुद्र का पार में ले चलेगा ? दिन-रात में इस चिन्ता से विता रहा हूँ। तुम्हारे निज प्राण नाथ को मानस चिन्ता जाल ने फंसा लिया है ॥१३८॥ ततपश्चात् मैं विरह से व्यथित होकर तुम्हारे उपवन में सोगया, तव तुमने स्वप्न के छल से निज मधुर श्रीराधानाम को सुनाकर एवं मेरी चिन्तातीत रूप स्वरूप को देखाकर मुझ को तुमने जगाया ॥१३९॥ हे प्रेयसि ! स्वप्न

सहजादेव तु दिव्या मुरली स्वयमधि गायति नाम गुणाली: ।
तव परमाद्‌भुत मधुरिम भरिता दिन निशि न मया क्षणमपिरहिता ॥१४१
गायति मुरली मम किमपूर्वं सन्ततमिति विस्मितधीरम् ।
अहह पुरा करुणामयि ! संप्रति धन्यतमां स्तौम्यनिशममूं प्रति । १४२
अनया सहज त्वद्‌गुण रसया ध्यद्य कृता स्त्वयि काकुप्रचयाः ।
दुस्तर काम कदन दलनाय प्रेयसि ! कथमपि तव मिलनाय ॥१४३
त्वन्नामैक परा मम मुरली स्वय मायन्मुग्धा कुलटाली ।
तत्र न कुरु मयि दोषारोपं ननुरस रूप सपित्यज कोपम् ॥१४४
त्वत् सङ्गम रस निवसज्जीव: प्रणयिनि शङ्का रहितोऽतीव ।
दीन दयार्त्त: कुतुकित हृदय: खेलाम्राहृत गोपीनिचय: ॥१४५

व जागरण में पहले से ही तुम मेरी हृदयमें स्फुरित हो रही हो वाहर तुम्हारे रूप को न देखकर इतस्तत: मिथ्या विषय में अन्यनारी में तुम्हारे रूप को आरोप कर ही अबतक घुम रहा हूँ ॥१४०॥ मेरी मुरली सहज ही स्वयं तुम्हारे नाम गुणावली का गान उच्चै:स्वर से करती रहती है, वह तुम्हारी अद्‌भुत माधुरी पूर्णा होने के कारण दिवानिशि क्षण काल के लिए भी मैं उस को छोड़ नहीं सकता हूँ । ॥१४१॥ मेरी मुरली क्या अपूर्व गाती है ? यह सोचकर पहले मैं अचरच में पड़ गया था । अहो ! करुणामयी, अब मैं उस गानका तात्‌ पर्य को समझ कर धन्यतमा मुरली का सर्वदा स्तव करता हूँ । ॥१४२॥ स्वाभाविक तुम्हारे गुण रसोन्मत्ता मुरली तुम्हारे लिए अनेक दैन्योक्ति की है । हे प्रेयसि ! सुनो, उसका कारण मैं कहता हूँ । दूस्तर काम पीड़ा को नष्ट करके जिस किसी प्रकार से तुम्हारे साथ मेरा मिलन कराने के लिए ही मुरली निनादित होती है ॥१४३ मेरी मुरली तुम्हारे नाम लेकर निनादित होतीहै, किन्तु मुग्धा कुलटा रमणी गण स्वयं आजाती है । उस से तुम मेरे प्रति दोपारोप नहीं कर सकती हो । हे राधे तुम्हारा यह कोप मान रस निदान होने पर भी अब उसको छोड़ो ॥१४४॥ हे प्रणयिनि ! तुम्हारे सङ्गम की आशा से मैं जीवित प्राण निरतिशय नि:शङ्क था । मैं दीन जनके

सुप्रसन्नवदनां न निरीक्षे त्वां यदि कृतमज्जीवन रक्षे ।
को नु तदा मम कौतुक कामः कायादेरपि वृत्तिविरामः ॥१४६

क्षान्ति स्नेह कृपामय प्रकृते निज भृत्ये मयि दीने प्रणते ॥
कर्णजाप मपि कुर्वत्यालिनिकरे नेष्व्याप्यागः पटली ॥१४७

अथ हतभाग्यतमे मयि राधे ! नाशु प्रसीदस्यसदपराधे ।
त्वत् पदकाङ्कितवृन्दाविपिने क्वापि दशास्यान्मम मृगनयने ॥१४८

श्रुत्वैवं हरिवाक्यकदम्वानेष्यसि यदि चल तिष्ठ सुखं वा ।
मम तु भवत्याः श्रीपदकमलादितरपदेधीस्तनुरपि न चला ॥१४९

साश्रु सगद्‌गदमिति निगदन्तं कान्तावेशधरं निजकान्तम् ।
विस्मयमूकास्वालिषु राधा प्राह सरसमिदमनुरागान्धा ॥१५०॥

श्यामलगोपकिशोरि त्वयिमे कृष्ण इवात्मा प्रीतिं चकमे ।

प्रति दयार्त्त एवं कौतुहलाक्रान्त होकर तव समागत गोपी मण्डली के साथ ही मैंने क्रीड़ा की ।१४५॥ मेरा जीवन की रक्षा के लिए यदि तुम को प्रसन्न नहीं देखता हूँ, तव मेरी यह कौतुक और काम अतितुच्छ होगा, अधिक में क्या कहूँ । तव मेरा देहादि की वृति भी विरत होगी । अर्थात् जीवन चला जायेगा ॥१४६॥ हे क्षान्ति, स्नेह कृपामयि राधे ! तुम्हारा निज भृत्य, दीन, प्रणत दास के प्रति सखी समूह अनेक प्रकार निन्दावाद तुम्हारे निकट करने पर भी तुम उस में से दोष राशिका ग्रहण न करना ॥१४७॥ हे मृगनयने राधे ! शेष कथा यह है कि—यदि हतभाग्यतम निरपराध मेरे प्रति शीघ्र प्रसन्न न हो तव तुम्हारे पदाङ्कित इस वृन्दाविपिन में मेरी मृत्यु हो जावेगी ॥१४८॥ श्रीहरि के यह वात शुनकर यदि जाने की इच्छा हो तो चलो नहीं तो यहाँपर आनन्द से रहो ! मेरा मन तो तुम्हारे चरणतल से विन्दुमात्र चञ्चल नहीं होता है ॥१४९॥ अश्रुभाराक्रान्त नयन से गदगदाय स्वर से कान्ता वेशधारी निज कान्त श्याम सुन्दर जव उस प्रकार कहने लगे थे तो सखीगण विस्मयान्वित होकर नीरव रही, तव अनुराग से अन्धी भूता श्रीराधा उनको प्रेम से इस प्रकार कही ॥१५०॥ हे श्यामल गोप किशोरी ! तुम्हें देखकरमेरामन

क्व स्थितवत्यसि कालमियन्तं पुण्यै स्तव मुख मीक्षि सुकान्तम् ॥१५१

प्राय स्तीव्रतरानुध्यातः कृष्ण स्त्वं मम सुसखीभूतः ।

इदमतिभद्रतरं यदशङ्कं साधुनिधास्ये प्रियतममङ्कम् ॥१५२॥

यदि मम कथमपि तादृश वेशः स्मृतिपथमेयान्निजहृदयेशः ।

बर्होत्तंसा वादितवंशा सुखयिष्यसि मां त्वं तद्वेशा ॥१५३

यदपि परार्द्धान् हरिरपराधानकृत तथापि क्षमते राधा ।

यत्ते वदन चन्द्रसौन्दर्य्यं स्वमपि ममक्रीणादाश्चर्यम् ॥१५४

एह्येहि स्फुट नीलसरोरुहसुकुमाराङ्गि सखीमुपगूह ।

स्नेहोत्तरले मां हरिविरहप्रभवः शाम्यतु वत तनुदाहः ॥१५५

इत्युक्त्वासीद् वृषभानुसुता सपदिविवृद्ध प्रणयावशता ।

प्राण पतिं पुलकाञ्चितगात्रा परिरभ्यास्ते मुकुलितनेत्रा ॥१५६

अथ परिरभ्य हरिः परिचुम्वन्मुखमरसयदपि चाधरविम्वम् ।

श्याम सुन्दर के समान प्रीतिमय आचरण करना चाहता है ॥ अभी तक तुम कहाँ रहीं, अनेक दिनों के वाद पुन्य से ही आज दर्शन मिला ॥१५१॥ तैल धारावत् अविच्छिन्न प्रवाह से स्मरण कर कृष्णवर्ण मनोहर सखी रूप में मेरे पास आई हो, यह अति सुन्दरहै, मैं निःशङ्क चित्त से प्रियतम को कोड़देश में स्थापन करूँगी ॥१५२॥ यदि इस प्रकार वेष भूषा से शोभित होकर मेरा हृदयेश्वर मेरी स्मृति में उदित होते हैं, तब तुम शिर में मयूर पुच्छ से निर्म्मित चूड़ा धारण कर वँसुरी वजाते हुये उस वेषसे ही मुझ को सुखी कर सकोगी ।१५३ यद्यपि श्रीहरि असंख्य भी अपराधाचरण करे, तो भी श्रीराधा उसको क्षमा करेगी, तुम्हारे यह आश्चर्य वदन चन्द्र का सौन्दर्य ही मेरा यथा सर्वस्व को खरीद लिया है ॥१५४॥ हे सुजात नील कमलवत् सुकुमाराङ्गि ! आओ आओ इस सखी को आलिङ्गन करो, हे स्नेह चञ्चले मेरा हरिविरह जात देहताप को आलिङ्गन देकर शान्त करो यह कहकर वृषभानुनन्दिनी वढ़ती हुई प्रणय रस से अवश हो गई, एवं पुलकाञ्चित कलेवर से प्राण पति को आलिङ्गन कर नयन मूँद कर रही ॥१५५-६॥ तदनन्तर हरि भी उनको आलिङ्गन

कुचमुकुले नखराङ्कु रदायी कृष्णोऽभूत् पुनरिति कुस्मायी ।।१५७
ज्ञातं ज्ञातमहो रस भरितं धूर्त्त मणे ! तव सकलं चरितम् ।
इति सहसित राधेरित हृष्टः कुञ्जगृहान्तः सपदि प्रविष्टः ।।१५८

कलितयुवति वेशोमानिनीमेत्य राधाम् ।
हरिरनुनय काकु व्याकुलोक्ति प्रपञ्चैः ।।
सपदि सहजवृद्ध प्रीतिदत्ताङ्गसङ्गां
स जयति परिहृष्यन् गाढ़मालिङ्ग्य कान्ताम् ।।१५९

अथ सहजोज्ज्वल भावोज्जृम्भः प्रिययालम्भितभुजपरिरम्भः ।
प्रकट तनुः स श्याम किशोर स्तन्मिलित श्चलितो रतिचोरः ।।१६०
तौ रसमूर्त्ती राधाकृष्णौ श्रीवृन्दावन रास सतृष्णौ ।
अति शुशुभाते मोहनवेशौ प्रतिपदविरचित केलिविशेषौ ।।१६१
गौर श्यामल मोहन मूर्त्ती निरवधि वर्धि मदनरसपूर्त्ती ।

करके मुख चुम्बन करते करते अधर सुधा पान किए, कुच मुकुल में नखराघात करते करते पुनर्वार कृष्ण मूर्त्ति को प्रकट कर ईषत हास्य करने लगे ।।।१५७।। हे धूर्त्त शिरोमणि ! अहो तुम्हारे रस भरित सव चरित्र ही जान गई, श्रीराधाकी इस हास्योक्ति से हृष्टचित्त श्रीकृष्ण सहसा ही कुञ्ज गृह में घूस गए ।।१५८।। श्रीहरि युवति वेष धारण कर मानिनी श्रीराधा के निकट आगए थे, वहुविध अनुनय विनय काकूक्ति द्वारा कान्तामणि श्रीराधा का सहज विवर्द्धिष्णु प्रीति भरित अङ्ग सङ्ग को प्राप्त कर उनको निविड़ आलिङ्गन पूर्वक परितुष्ट होकर जय युक्त हो रहेहैं ।।१५९।। सहज उज्ज्वल भावमय वह रति लम्पट श्याम किशोर प्रिया का भुज परिरम्भण प्राप्तकर युवति वेश को छोड़ कर निज देह को प्रकट कर दोनों मिलकर रास मण्डल के और चलदिये ।।१६०।। श्रीवृन्दावन में रास रस के लिए तृष्णाशील वह रस मूर्त्ति राधा कृष्ण मोहन वेश से अतिशय शोभा का विस्तार करने लगे, वे दोनों प्रतिक्षण में ही विशेष विशेष केलि विलास करने में प्रवृत्त हो गये ।।१६१।। वह गौर श्याम मोहन मूर्त्ति युगल निरन्तर

निरुपम नवतारुण्य प्रवेशौ रास विलासौचित वरवेशौ ॥१६२॥
वेणी चूड़ा रचित सुकेशौ मिथ उद्भवदति मदनावेशौ ।
अरुण पीतपटवर परिधानौ दिशि दिशिविसरद् दीप्तिवितानौ ॥१६३॥
रति रतिनायक कोटिविलासौ मधुर विलोकपरस्परहासौ ।
मिथ आश्लेषित निजतनुदेशौ पुलक मुकुल कुलसततोन्मेषौ ॥१६४
मिथ ऊरुविधकृत नर्मालापौ नव नव निर्मित केलिकलापौ ।
विविध भङ्गिगति विजित मरालौ नूपुर रसना क्वणित रसालौ ॥१६५
रुचिरान्दोलन सुभुज मृणालौ गल दोलायमानवरमालौ ।
मिथ उत्पुलक भुजा कलितांसौ सव्यतदन्य भुजाम्बूजवंशौ ॥१६६
मिथ ईक्षित मुखचन्द्र सहासौ श्रुति पूरण निरतेरितवंशौ ।

वर्द्धिष्णु मदन रस पूरित होकर अनुपम नव तारुण्यका उन्मेष से रास विलासोचित अत्युत्तम वेश से सज्जित हो गए ॥१६२॥ वे दोनों सुन्दर केशोंसे वेणी एवं चूड़ा की रचना की है, परस्पर के मदनावेश क्रमश: उदित होने लगा, दोनों के परिधान में अरुण वसन एवं पीत वर्ण के अत्युत्तम वसन दिक् दिक् में दीप्तिराशि का विस्तार कर रहे हैं ॥१६३॥ दोनों कोटि कोटि रति एवं काम देवके विलास रस की प्रकाश कर रहे हैं। परस्पर के प्रति मधुर निरीक्षण से परस्पर मधुर हँस रहे हैं। निज तनु को परस्परके द्वारा आलिङ्गित करके रखे हैं। सदा ही उनदोनों के अङ्ग में पुलकावलि रूप अङ्कुर का उन्मेष दिखाई देता है ॥१६४॥ परस्पर वहुविध नर्म परिहास रस रहस्यमय आलाप कर रहे हैं, नित्य नव नवायमान केलिविलासादि का उद्भावन करते रहते हैं, विविध गतिभङ्गी को अङ्गीकार कर मराल को भी पराजित कर रह हैं, एवं चरण में नूपुर एवं कटि में रसना रसाल ध्वनि कर रही हैं ॥१६५॥ दोनों के भुजमृणाल मधुर मधुर आन्दोलित हो रहे हैं, गलदेश में अत्युत्कृष्ट मालाझूका ले रही है, वे दोनों पुलकाञ्चित बाहु से परस्पर के स्कन्ध देश को अवलम्बन करके हैं, श्रीराधा के वाम हस्त में पद्म एवं श्याम के दक्षिण हस्त में में वंशी शोभित है ॥१६६॥ परस्पर के मुख को देखकर परस्पर हंसते

द्रुत काञ्चन मरकत रुचिचोरी सर्वादभूततम दिव्य किशोरौ ॥१६७
नित्यमधुर वृन्दावन केलौ शुद्धमहारस पूर्ण गुणाली ।
कलित मुरज करताल सुवीणै नृंत्यगीत वरवाद्य प्रवीणैः ।
राधाकृष्ण रसैक प्रथनैः सहितो सुरसोल्लसितालिजनैः ॥१६८॥
मणिमय पेटिकान्तरुपनिहितं रास विलासोपकरणजातम् ।
आदायाति हर्षभरभरिता स्तत् सेवैक परा अनुयाताः ॥१६९॥

शुद्धोज्ज्वल प्रेमरसैक शक्ति
तद्वत् स्वरूपौ सुखसार राशी ।
तौ नः किशोरौअतिगौरनीलौ
खेलायतां चित्रमनोजलीलौ ॥१७०॥

गत्वा तावथ वृन्दारण्यं, स्वगति पुरस्तादुत्सवशून्यम् ।
परिचरणोल्लसित ब्रजयुवती मध्येरेजतुरद्भुतदीप्ती ॥१७१

रहते हैं, श्रीश्याम वँसुरी वजाते हैं, श्रीराधा उस को सुनकर श्रवण को तृप्त कररही है, एकने तो गलित सुवर्ण वर्ण के उपर विजय लाभ किया है तो दूसरेने मरकत कान्ति को ही चोरी कर लिया है। यह दिव्य किशोर द्वय सर्वथा ही अद्भुत है ॥१६७॥ शुद्ध महारस शृङ्गार पूर्ण गुणावलि भूषित यह युगल नित्य ही मधुर वृन्दावन में मधुर केलि करते रहते हैं, मृदङ्ग, करताल, एवं सुन्दरवीणा यन्त्र लेकर नृत्य, गीत, वाद्य में कुशल राधा कृष्ण के रस का एक मात्र विस्तार कारी सुरस से उल्लसित सखीगण को साथ लेकर दोनों ने यात्रा की एवं निरतिशय आनन्द पूर्ण युगल किशोर की सेवा निष्ठ दासीगण मणिमय पेटिकाके अभ्यन्तर में रासलीला के उपयोगी द्रव्य समूह को लेकर पीछे पीछे चलने लगीं ॥१६८-१६९॥ विशुद्ध उज्ज्वल रस की शक्ति राधा, एवं शक्तिमान् श्रीकृष्ण युगल रूप के देह गठन किए है, अतएव उसका ही सुख विनिर्यास राशि को दोनों जन भोग कर रहे हैं। हमारे अतिगौर नीलात्मक किशोर द्वय विचित्र कामलीला परायण होकर खेल रहें हैं ॥१७०॥ तदनन्तर उत्सव शून्य वृन्दावन

काश्चन चक्रु: पदसंवाहं काश्चन भेजुः सुरतोत्साहम् ।
काश्चनगन्धैर्व्यलिपन्नपराः कण्ठे निदधुर्मालारुचिराः ॥१७२
चक्रुरथैका भ्रूकुटिविलासं विदधुः काश्चन रतिपरिहासम् ।
काश्चन मृदुमृदु विदधुर्व्यजनं का अपि चक्रुर्भूषारचनम् ॥१७३
नागवल्लिदलमुज्ज्वल चन्द्रं दत्तवती काप्यधिमुखचन्द्रम् ।
नवनवकामकलाविर्भावं व्यञ्जितवत्यः काश्चन भावम् ।
मृदुमृदुवीणाद्यतिनिरवद्यं वादितवत्यः काश्चन वाद्यम् ।
काश्च संजगू रसानुरागा, मधुरमुदञ्चितपञ्चमरागाः ॥१७५
वहुविध हस्तक गतिलीलाभिः काश्चनवलितानृत्यकलाभिः ।
प्रिययोरुपरि सुपुष्पच्छत्रं काश्चन जगृहुः परमविचित्रम् ॥१७६
वरनागरिका वरनागरयो रुन्मद मदन रस प्रहसितयोः ।
प्राप्य तयोः करपद्मात् प्रमदाः कमपि प्रसादं व्यलसन् प्रमुदाः ॥१७७

में उपस्थित हो गए, परिचर्या रस में मग्न व्रज युवती गण के मध्य में दोनों अद्भुत कान्ति को विस्तार कर विराजमान हो गए ॥१७१॥ कोई तो पाद सम्वाहन करने लगी, कोई सुरत मङ्गल करने लगी, किसी ने विविध गन्धद्रव्य द्वारा अङ्ग लेपन किया, अन्यान्य गोपीगण दोनों के कण्ठ में मनोहर माल्य प्रदान किये, ॥१७२॥ किसी ने कटाक्ष पात किया, किसीने रति रस से परिहास किया किसी ने मृदु मृदु व्यजन किया, अपर गोपियों ने भूषण की रचना की ॥१७३॥ किसी गोपीने दोनों के मुखचन्द्र में ताम्वूल एवं उज्ज्वल कर्पूर प्रदान किया, अन्यान्य गोपीगण नव नवायमान काम कला का आविर्भाव सूचक भाव की व्यञ्जना की ॥१७४॥ किसी ने वीणा वादन किया किसीने रसानुराग से पञ्चमराग का आलाप मधुर स्वर से किया ॥१७५॥ किसी ने वहुविध हस्तक गतिलीलादि नृत्य कला का प्रदर्शन किया, किसीने प्रियतम युगल के उपर परमविचित्र सुन्दर पुष्पछत्र धारण किया ॥१७६॥ अत्युत्तम नागरी एवं अत्युत्तम नागर उन्मद मदन रस से हास्य करतेहैं, उनके हस्त कमल से प्रसाद प्राप्तकर प्रमदागण प्रचुरतर आनन्दित होकर विराजित हैं ॥१७७॥

छित्वा छित्वा वीटक भेदान् ललितलवङ्ग क्रमुकच्छेदान् ।
रसिक मिथुन मुपयोजितवत्यः काश्चन काश्च पतद्ग्रहवत्यः ॥१७८

कर्पूरादि सुवासित शीतं भृङ्गारेणसलीलमुपनीतम् ।
कृत्वाप्रियमिथुनेन निपीतं स्वं विदधुः काश्चन सुप्रीतम् ॥१७९

आपुः काश्चन कण्ठगमालाः स्वाभरणानि च का अपि बालाः ।
वरताम्बूल सुवीटकमन्या श्चर्वितमेव तु काश्चन धन्याः ॥१८०॥

एकाः स्निग्धालिङ्गनमापुः करधृत्यैव काश्च पर्यापुः ।
काश्चन कर्ण कथाभि र्मुदिताः काश्चित् वचनश्लाघनमहिलाः ॥१८१

अथ सुरतोत्सुकरामावृन्दं दुर्धरकामार्त्तिभिरत्यन्धम् ।
दृष्ट्वात्युत्कट भावविकारं राधानिजपतिमवदकुदारम् ॥१८२

अबलाः प्रियविषमस्मरबाधास्तां तु न दित्सेत् त्रुटिमपि राधा ।
तच्छृणु कथमास्येकमुपायं रमयसि येन युवतिसमुदायम् ॥१८३

कान्तकदाचिन्मम सङ्कल्पः समभूदकृतविचारोऽनल्पः ।
बहुरूपं त्वां रमयितुमुरुभि र्बहुभीरूरै र्बहुविधरतिभिः ॥१८४

किसीने उपादेय लवङ्ग, गुवाक् खण्ड युक्त बहुविध ताम्वुल वीटिका का आस्वादन कराया, अपर किसी ने पिकदानी हात में लेकर खड़ी होगई ॥१७८॥ किसी ने भृङ्गार को भर कर शीतल जल ले आर्या एवं प्रियतम युगल को जलदान कराकर आपने को खुसी किया ।१७९ किसी व्रजवालाने कण्ठस्थित प्रसादी माला किसीने सुन्दर आभूषण प्राप्त किया, किसीने स्नेहालिङ्गन प्राप्त किया, किसीने करधारण से आनन्दलाभ किया, किसी गोपी कर्ण कथा सुनकर खुसी हुई तो कोई गोपी प्रशंसा सुनकर आनन्दिता होगई ॥१८०॥ अनन्तर दुर्धर्ष काम पीड़ासे महान्ध सुरतोत्सुका रमणी वृन्द को उत्कट भाव विकारशील देखकर श्रीराधाने निज नायक श्रीश्यामसुन्दर को सरलभाव से वोली ॥१८१।२। हे प्रियतम ! ये अवलागण विषय काम पीड़ा से व्यथित होरहीं है, राधा उन सवको विन्दुमात्र भी काम पीड़ा देना नहीं चाहती है, अतएव एक उपाय वोलती हूँ, सुनो ! इस से तुम युगपत् सव युवतीयोंके साथ रमण कर सकोगे ॥१८३॥ हे प्राणकान्त किसी

अत्युत्कण्ठाभरभादनतस्त्वन्मद्रूप स्तोमोदयतः ।
केलय ऊरुवैदग्ध्या विहिता मनस पूर्त्तिः काप्यत उदिता ॥१८५
प्रियसखि ! किं नु करोषीत्युक्त्वा गात्रे मम कराघातं कृत्वा ।
सख्या भग्नसमाधिर्नयने, उन्मील्याहसमखिलाकलने ॥१८६
सम्प्रत्यपि च मुहूर्त्तं ध्यात्वा, कुर्वे बहुरूपं रसयित्वा ।
रूपं स्तैरभिरूपैर्नागर, गोकुल युवति गणैस्त्वं विहर ॥१८७
शैशव इष्ट योगमायादात् मम संकल्पसिद्धि मतिरसदा ।
त्वमनन्यानुरागपतिरभवस्तद्वदस्तु सुखसीमानुभवः ॥१८८
अथचित्रेक्षण कुतुकिनि रमणे, स्मयवति चाथ रहस्यालिगणे ।
किञ्चित् स्मितरुचि मोहन वदनं दधौराधामुकुलित नयनम् ॥१८९

समय विना विचार से ही मेरा एक संकल्प हृदय में जग उठा था, कि—वहु विधरूप प्रकटन कारी तुम्हें वहुविध रति की नायिका के साथ अनेक प्रकार से रमण कराऊँगी ॥१८४॥ अति उत्कण्ठा से तुम्हारे और मेरे रूप राशि को प्रकट कर बहुल वैदग्धीके साथ केलि विलामादिका समाधान मैंने कियाहै, एवं इससे ही मेरा यह अनिर्वाच्य मनोवाञ्छा पूर्त्ति का उदय हुआ है ॥१८५॥ उस समय मुझे समाधि मग्न देख कर "हे प्रियसखि ! क्या कर रही हो" ? ऐसा कहकर किसी सखी मेरा अङ्गमें कराघात करने से मेरी समाधि टूट गई थी, अनन्तर निखिल प्रस्ताव का समाधान को देखकर मैं नयन उन्मीलन कर हँस गई थी ॥१८६॥ अभी भी मैं मुहूर्त्त काल ध्यान कर रस मय वहु रूप का प्रकटन कर रही हूँ। हे नागर ! तुम भी (समाधि में दृष्ट) उस प्रकार अनेक मनो मोहन रूप को प्रकाश कर गोकुल युवतियों के साथ विहार करो ॥१८७॥ शिशु काल में अतिरसमयी इष्टदेवता योगमाया ने मुझे संकल्प सिद्धि का वर प्रदान किया है, तुम अनन्यानुरागमय पति (नागर) को प्राप्त करो एवं उस प्रकार से ही तुम्हारी सुखैक शेष की उपलब्धि भी हो ॥१८८॥ तत् पश्चात् राधा रमण विचित्र (रासरस) दर्शन के लिए कौतुकी होने पर एवं एकान्त में सखीगण भी हँसते रहने के कारण राधा ईषत् मृदु मधुर

प्रकटाः प्रियतममूर्त्तीर्मधुरा दृष्टा लोभादतिकामधुरा ।
कृत्वा स्वमपि च सा तावन्तं व्यसृजच्चुम्बितपरिरब्धं तन् ।'१६०
अथ कलितप्रियपाणि सरोजा राधातीवविवृद्धमनोजा ।
मञ्जुलकुञ्जविलोकनकपटाद् गहनवनं सहसैवप्रविष्टा ।।१६१
स वहुरूपहरिररमत ताभिः प्रथमोज्ज्वलरसरभस युताभिः ।
रसिकशिरोमणिरतिरसिकाभिर्मधुरिमराशिरधिकमधुराभिः ।१६२
प्रथमसमागमह्रीभयवलिता दूरात्तूष्णीमास्थित विनताः ।
काश्चननिन्ये शयनमुदारः सानुनयंकृतवाहुप्रसारः ।।१६३
किमपि करोमि न ते भजशयनं स्वजने किमिदमहोसङ्कुचनम् ।
पायय किमपि वचोऽमृतमतुलं, स्वीकुरुगन्धमाल्यताम्बूलन् ।।१६४

हास्य शोभित मोहन वदन से नेत्र को मूँद कर ध्यान करने लगी ।। ८६।। तव आपने प्रियतम की अनेक मधुर मूर्त्ति राजिका प्रकटन को देखकर लोभ से अति कामोन्मत्ता होकर अपने को भी उतनी मूर्त्तियों में प्रकाश किया एवं उस उस स्वरूपको प्रियतम द्वारा चुम्वित एवं आलिङ्गित कराया ।।१६०।। अनन्तर प्रियतम के कर कमल को पकड़ कर श्रीराधा निरतिशय कामावेग से मञ्जुल कुञ्ज दर्शन के छल से सहसा गहन वन में घूस गई ।।१६१।। तव वह वहु रूपी हरि उस आदि उज्ज्वल रस रभसयुक्त राधा के काय व्यूह राधा गोपीयों के साथ रमण करने में प्रवृत्त हो गए ! तव रसिक शिरोमणि के साथ रति रसिका गण का मिलन हुआ, मधुरिमराशि के साथ अधिकतर माधुरी धारिणी का सङ्ग हुआ ।।१६२।। किसी किसी रमणी गोपी प्रथम समागममें लज्जा एवं भयके कारण दूरमें निर्वाक् एवं निष्पन्द होकर अवनत मस्तक होकर रही, यह देखकर मोहन कृष्ण वाहु प्रसारण द्वारा अनुनय कर उन सवको सेजपर ले गए ।।१६३।। तुम्हारे कुछ नहीं करेंगे, तुम सेजपर सो जाओ, अहो ! निज जनके पास ऐसा सङ्कोच क्यों करती हो, एकवार वाक्यामृत पान कराओ, यह अनुपम गन्ध माल्य, ताम्वूलादि ग्रहण करो ।।१६४।। इस प्रकार किसी धन्या गोप किशोरी को अनुनय किए, अनन्तर उस की मृदु मधुर हास्यमय

कामपि धन्यामित्यनुनीय, स्मितरुचिरुचिरां सहसानीय ।
शयनं नेति सगद्गदवचनामलमाश्लिष्याचुम्बत् प्रमनाः ॥१९५
निद्राव्याज विमुद्रित नयनं वदनं चुम्बितमन्याः शयनम् ।
प्राप्ताः स्वस्य हसन्नुरु पुलकः पर्यरभत नव नागर तिलकः ॥१९६
नेति वचन रचना अपि चान्याः कर कमले धृतवानतिधन्याः
आनीयाङ्कमसौ कुसुमाली मरचयदलकचये वनमाली ॥१९७
काश्चन हारलतार्पण कपटादुन्मदकरमृदितस्तनसुघटा ।
सुखमपिदुःखमिवाभिनयन्ती वीक्ष्य हरिः स जहासलसन्तीः ॥१९८
कुचमुकुलादौकृतनखलिखनः पीताधरदलकृतरदखलनः
तासामुत्तम्भित पुरुमदन स हरिरखेलच्चुम्बितवदनः ॥१९९
सहसा नीविवन्धनमिलितं सम्भ्रमयुतयुवतीकरविधृतम् ।
अतिदुर्धरमदनात्युत्तरलं तदतिविरेजे हरिकरकमलम् ॥२००

रमणीय मूर्त्ति को देखकर उसको सहसा सेज पर ले गए, वह गदगद स्वर से 'ना ना' कहकर असम्मति प्रकट करने पर भी श्याम ने आनन्दित होकर उस को आलिङ्गन चुम्बन प्रदान कर कृतार्थ किया ॥१९५॥ अन्यान्य गोप बालागण श्याम के शय्या के पास आकर श्याम को निद्राछल से मुद्रित नयन देखकर चुम्बन करने लगी, नव नागर तिलकने उसी समय हँस हँस कर पुलकायित होकर उन सब को परि रम्भण किया ॥१९६॥ अपरापर व्रजाङ्गना गण 'ना' कह कर निषेध करने पर भी वनमाली उन सब को गोदीमें बैठालिए एवं उनसब के कुञ्चित केशदाम को पुष्प हार से सज्जित किए। १९७॥ किसी किसी गोपी की हारलतादान करने के छल से उन्मत्त हस्त से श्यामने उनके स्तन कमल द्वयका मर्दन किया। सब सुख में भी वे सब दुःखवत् अभिनय करने लगी, यह देखकर श्रीहरि ने हँसा ॥१९८ उनके कुचमुकुलों में नखराघात एवं अधर रस पान पूर्वक अधर में दन्ताघात करके महाकाम को प्रवुद्ध कर चुम्बित वदन श्रीहरि खेलने लगे ॥१९९॥ अति दुर्धर्ष मदना वेश से परम चञ्चल श्रीहरि के कर कमल सहसा नारियोंके नीवीवन्धन खोलने में प्रवृत्त होने पर सम्भ्रम

रेमे मधुपति रथललनाभि र्बहुविधसुरतवन्धरचनाभिः।
रतिरसरभसोल्लसिततदूरुः स्पर्शन वहु परिपाटी चारुः ॥२०१
उच्छृङ्खलं रतिखेला श्रान्तः प्रोन्मदरति रभसोद्यतकान्तः।
तन्मुख वीक्षण कृत परिहासः स्मेरमुखोऽमोदत सविलासः।२०२
इत्थं विहरति राधा रमणे, वलदभिमाने युवति विताने।
तानि पिधाय स्वकरूपाणि, क्वापि विजह्रे राधाजानिः ॥२०३

आनीय गोपतरुणीर्मुरलीरवेण

राधामपि प्रचुर काकुभिरागमय्य।

तासां स्वक्लप्त रतिसन्ततिजाभिमानं

शान्त्यै कृपानिधिरथ प्रिययैक आसीत्।२०४

कृष्णमदृष्ट्वा गोप्योऽनवधौ, सपदि निमग्नाः शोक पयोधौः
हा नाथेति व्याकुल वचना श्चेरुः परितो विह्वल करणाः ॥२०५

युक्त गोपीगण ने ततक्षणात् उसको पकड़ लिया ॥२००॥ तव अनेक विध रति वन्ध रचना कर गोपललनागण के साथ मधुपति रमण करने लगे। रति रस प्राचुर्य से उल्लसित होकर उन के उरुदेश उस समय गोपीगण के स्पर्श से वहु परिपाटि के साथ सुचारुता को प्रकट किए ॥२०१॥ अमर्याद रति खेल से परि श्रान्त एवं प्रोन्मद मदना वेश में निरत होकर भी रमणीय हरि उन सव के मुख की देखकर परिहास करने लगे। उन के मुख में मृदु मधुर हास्य था, प्रमदा गण के साथ विलास कर आपने आमोद प्राप्त किया ॥२०२॥ श्रीराधा रमण, इस प्रकार विहार रत होनेपर युवति गण के चित्त में महा अभिमान। उदित हुआ, यह देखकर राधानायक, निज प्रकाश मूर्त्ति समूह को अन्तर्हित करके अन्यत्र कहींपर विराजित हो गए ॥२०३॥ मुरलीरवसे गोपवालागण को बूलाके लाकर, एवं प्रचुरतर अनुनय से श्रीराधाको लाकर गोपीगणके रति राशिजात अभिमानको प्रशमित करने के लिए कृपानिधि कृष्णचन्द्र तव प्रियतमा राधा के साथ अन्यत्र विचरण करने लगे ॥२०४॥ श्रीकृष्ण के अन्तर्धान से गोपी

चिन्मयमन्तरुदितहरिरूपं मूर्त्तमिवाच्युतसुरतस्वरूपम् ।
वृन्दाविपिनलतातरुवृन्दं ताः पप्रच्छुर्निजसुखकन्दम् ॥२०६
भो अश्वत्थप्लक्षवटा वः किं दृष्टोहरि रानतभावः । ?
सहि न श्चोरित हृदयो यातः प्रेमहसित दृक् शर संघातः ॥२०७
भो भो श्चम्पक केशरनाग, प्रियकाशोकवकुलपुन्नाग !
जम्बुकुरुवकपनसरसालक्रमुक कुटज वकताललतमाल ॥२०८
अहह महान्तो यूयं सदया, वयमपि विरह व्याकुलहृदयाः ।
कथयत मानवतीहृतमानस्मितवदनस्य हरेः पदवीं नः ॥२०९
अयि सखि माधवि मालति मल्लि जातियूथि नीलिनि शेफालि ।
मा गोपयत गोपकुलतिलकं, कृतकर संस्पर्शं किलरसिकम् ॥२१०
अयि कल्याणि तुलसि हरिचरणा,म्बुजदयिते त्वं कुरु वः करुणाम्
क्वास्ते वद नो जीवित बन्धुः सकल कलानिधिरतिरससिन्धुः ॥२११

गण तत्क्षणात् अशीम शोक सागर में निमग्न हो गईं । 'हा नाथ' 'हा नाथ' कहकर व्याकुल भावसे विलविलाकर हरिको इधर उधर ढुंढ़ने में लग गईं ॥२०५॥ उनके हृदय में चिन्मय हरिरूप उदित हुआ, उन्होंने मूर्त्त सुरत की भाँति श्री हरि की मूर्त्ति को प्रत्यक्षकिया एवं वृन्दाविपिन के लतातरुवृन्द के निकट उनकी कथा पुछने लगीं, ॥२०६॥ हे अश्वत्थ, प्लक्ष ! 'पापड़ी' एवं वटवृक्ष वृक्षगण ! तुमसवने क्या विनम्र मूर्त्ति श्रीहरि का दर्शन किया है ? प्रेममय हँसी से तथा नयन वाण के आघात से उन्होंने हमारे हृदयको चोरी कर भग गया है ॥२०७॥ हे चम्पक, केशर, नाग, प्रियक ' कदम्व ' अशोक, वकुल पुन्नाग, जम्वुन, कुरुवक, पनस (कटहर) रसाल, क्रमुक (सुपाड़ी) कुटज, वक, ताल, तमाल, वृक्षगण ! तुम सव सहृदय व महान्त हो, हमसव विरह में व्याकुल हैं, कहो ? मान वतीयों के मान को चोरी कर सुन्दर हास्य शोभित वदन हरि कहाँ चले गये ॥२०८।२०९॥ अयि सखिः ! माधवि, मालति, मल्लि, जाति, यूथि, नीलिनि (नील पुष्पिका) शेफालि ! तुम सव ने उनके कर स्पर्श प्राप्त किए हो, इस लिए गोपकुल तिलक रसिक श्याम सुन्दर को गोपन न करो ॥२१०।

अथ काश्चन हरि लीला ललिता, अनुकृत वत्यो मिथआवलिताः ।
अत्यावेशाद् विस्मित देहाःकाश्चन भेजु र्मधुरतदोहाः ॥२१२
द्रुमलतिकाः पुनरपि पृच्छन्त्यः, कुञ्जं कुञ्जं मुहुरभियान्त्यः ।
ददृशुः क्वचपद पङ्क्ति ललितां ध्वजवज्राङ्कुश पद्मादियुताम् २१३
ज्ञात्वा हरि पदचिह्नं रामा मृगयन्त्यस्तं रत्यभिरामाः ।
अन्य अपि पदलक्ष्मीश्रेणी ददृशुरिवाद् भुतमधुरिमवेणीः ॥२१४
श्रीराधाया इति निर्धारं कृत्वा वहुविध विहित विचारम् ।
ऊचुस्तत्पदपङ्कजयुगले वलदतिभावारसभर वहले ॥२१५

अन्तर्हिते दयितया सह कृष्णचन्द्रे
गोप्योमहानिविड़शोकतमोभिरन्धाः ॥
पृष्ठामुहुर्द्रुमलता अनुकृत्य लीलां
दृष्ट्वा पदानि तु तयोः समवर्णयं स्ताः ॥२१६

अयि कल्याणि तुलसि ! हे हरि चरण कमल प्रिये ! तुम हमारे प्रति करुणा करो, सकण कलानिधि रतिरस सिन्धु हमारे जीवित बन्धु कहाँ है कहो तो !! २११। अनन्तर कोई कोई गोपी परस्पर मिलित होकर हरि की मनोज्ञ लीला कदम्ब का अनुकरण करने लगी, वे सब महा आवेश से देह विस्मृत हो गई, कोई कोई तो उनकी मधुरलीला वलि भजन गाने लगी ।।२१२।। पुनर्वार वृक्ष लताओं से कृष्णवार्त्ता को पुछ पुछ कर मुहुर्मुहु कुञ्ज कुञ्ज में ढूँढ़ते ढूँढ़ते एकस्थान में ध्वज वज्र अङ्कुश, पद्मादि युक्त परम सुन्दर श्रीकृष्ण पदाङ्क पङ्क्ति को उन्होंने देखा ।।२१३।। रमणीगण हरिपद चिह्न का परिचय प्राप्त कर, उक्त पदचिह्न समूह को देख देखकर हरि को अन्वेषण करते करते आश्चर्य माधुरी धारावद् अति सुन्दर अन्यान्य पदचिह्न श्रेणी को भी देखीं ।।२१४।। द्वितीय पदचिह्न समूह श्रीराधा के ही हैं, इस प्रकार विचार पूर्वक निर्धारण कर रसातिशय्य वहुल उक्त पादपद्म युगल के प्रति अनुराग से कहने लगी ।।२१५।। कृष्णचन्द्र दयिता राधा के सहित अन्तर्हित होनेपर गोपीगण महाधन शोकान्धकार से

कृष्ण पदाङ्कं पश्यत कामं राधापदलक्ष्म्याप्यभिरामं।
सख्या इदं खलु दर्शित मनया दीनतमास्वतिनिर्भरकृपया ।२१७
प्रेष्ठतमांसार्पितभुजवल्लिः परमोज्ज्वलरसकल्पकवल्लिः।
राधाध्रुवमिह लीलागतिभिश्चलितामृदुमृदु नूपुरस्तिभिः ॥२१८
गन्तुमशक्तामथ तु कान्तां स्कन्धे कृत्वा चपल दृगन्ताम्।
उदवहदति पुलकित सर्वाङ्गः प्रोज्जृम्भित रतिरङ्गतरङ्गः ॥२१६
स्कन्धादवरोप्यात्र तु कान्तां प्रार्थित पुष्पां चलदलकान्तां
प्रेयस्यर्थे हरिरुल्लसितः कुसुमान्यवचितवानथ परितः ॥२२०
उपविश्याथ स उत्पुलकोरु द्वयमध्यगदयितामतिचारुः
गुम्फितवान् कुसुमैर्वरवेणी श्चक्रे चान्याभरणश्रेणीः ॥२२१
सख्यः पश्यत मञ्जुलकुञ्जे ध्रुवमिह गुञ्जन्मधुकर पुञ्जे।
प्राविशतां तौ सुरत सतृष्णौ मदकलमूर्त्ती राधाकृष्णौ ॥२२२

अन्धीकृत होकर मुहुर्मुहु वृक्षलताओं को पुछ पुछ कर, एवं लीलानुकरण कर युगलके पदचिह्न राजि को देखकर इस प्रकार वर्णन करने लगीं ॥२१६॥ हे सखीगण ! श्रीराधा के पदचिह्न शोभा रहित श्रीकृष्ण के नयनाभिराम पदाङ्क समूह को दर्शन करो। दीन तमा हमारे प्रति अति निर्भर (प्रगाढ़) कृपा द्वारा यह ही संसूचित हो रहा है ॥२१७॥ प्रेष्ठतम श्याम के स्कन्ध देश में भुजलता को स्थापन कर परमोज्ज्वल रस कल्पलता राधा निश्चय ही यहाँपर लीलागति को अङ्गीकार कर मृदु मधुर नूपुर ध्वनि के साथ चलेहैं ॥२१८॥ यहाँपर चञ्चल कटाक्ष शालिनी कान्तामणि राधा चलने में अक्षम होने पर रतिरस तरङ्ग व्याप्त पुलकाचित अङ्ग श्याम सुन्दर राधा के अपने कंधे से वहन किये हैं ॥२१६॥ यहाँपर चञ्चलालक शोभिता श्रीराधा पुष्प चाहने से उनको कंधे से उतार कर उल्लसित हरि प्रेयसी के लिए इतस्ततः कुसुम राशि चयन किये थे ॥२२०॥ पश्चात् परम रमणीय श्याम वैठगये, उच्च पुलका वलि शोभित ऊरुद्वय के मध्य में दयिता राधा को वैठाकर कुसुम माल्यसे अत्युत्तम वेणी एवं अन्यान्य वहुविध-अलङ्कार प्रस्तुत कर दिये हैं ॥२२१॥ हे सखीगण ! देखो

पश्यत पश्यत किशलयशयनं सफलीकुरुताद्यैव च नयनम् ।
सुरतविमर्दाद्विलुलितमीक्ष्यं त्रुटित कुसुम कञ्चुकशिखिपक्षाम् ॥२२३
इत्थं परममहारसधाम्नो र्वहुविध पदकैर्वहुमधुरिम्नोः ।
ताः समलङ्कृत सुस्थल जातं वीक्ष्यवीक्ष्य सुखमापुरमातम् ॥२२४
श्रीराधापि स्वपदैक रसा वुध्वा ता अतिकरुणा विवशा ।
रुष्टेवाह प्रियमति कृपणं त्वं चल नहि में शक्यं चलनम् ॥२२५
भीत भीत इव मृदुमृदु वदति स्कन्धं मम चिरमारोहेति ।
आक्षिपदेव रचित वहुलीलं सा निज पति मपि सत्वरशीलम् ॥२२६॥
स चतुर चूड़ा मणिरालक्ष्य प्रेयस्या हृदगतमविलक्ष्यः ।
तत् क्षणमभवत् सातु तदैव प्राप्तवती खलु मूर्च्छनमेव ॥२२७
हरि रपि प्रकटः पुलक युताभ्यां तामुत्थाप्यालिङ्गचभुजाभ्याम् ।

देखो ! मधुकर पुञ्ज गुञ्जरित यह मञ्जुल कुञ्ज में वह सुरत सतृष्ण एवं मदकल मूर्त्ति श्रीराधा कृष्ण प्रवेश किये हैं ॥२२२॥ देखो देखो, वह किशलय निर्मित शय्या है, आज ही तुम सव नयनों को सार्थक करो ! वह सुरत विमर्दन से स्रस्त विस्रस्त हैं, एवं कुसुम, कञ्चुक शिखि पिच्छ भी छिन्न भिन्न है ॥२२३॥ इस प्रकार परम रसमय वहु मधुरिमाशाली युगल किशोर के वहुविध पदाङ्क द्वारा समलङ्कृत सुन्दर स्थानों को देख देखकर वे सव अपरिसीम आनन्दित हो गही ॥२२४॥ उस समय श्रीराधा भी निरतिशय करुणा के उद्रेक से विह्वला होकर उन सवको निज पादपद्म के एकान्त रसाश्रिता जानकर अतिदीन प्रियतम को जैसे रुष्ट होकर ही वोली, 'तुम चलते रहो, मैं और चल नहीं सकती हूँ' ॥२२५॥ तव श्याम भीत सन्त्रस्त होकर ही जैसे धीरे धीरे कहने लगे-कुछ देर के लिए मेरे कंधे में ही चड़ जाओ, वहुविध लीला रचना कारी निज प्रियतम को त्वरान्वित होते देख कर श्रीराधा तव फट् कारने लगगई ॥२२६॥ चतुर चूड़ामणि कृष्ण प्रेयसी का भाव को समझ कर तत् क्षणात् आत्म गोपन करगए, श्रीराधा भी उसी समय मूर्च्छिता होगई ।२२७ हरि भी उसी समय पुनर्वार प्रकट होकर पुलकाञ्चित वहु युगल

अकृत तदुक्तः पुनरन्तर्धिं विहित तदङ्ग स्पर्शिसमृद्धिम् ।।२२८
दृष्ट्वा तामथ निज जीवातुं दीनतमामिव पृष्ट्वा हेतुम् ।
श्रुत्वा तन्मुखतः स्वहितार्था वाचस्ता अभवंस्तु कृतार्थाः ।।१२६
स्व स्वामिन्या पुनरपि सहिताः कालिन्दीये पुलिने याताः ।
द्रष्टुं राधासहितविहारं संजगुरार्त्ताः कृष्णमुदारम् ।।२३०
श्रुत्वा बहुविध कातर वचनं तासां राधा प्रणया रचनम् ।
आविरासहरिरतुलविलासःप्रमदासदसि सुधारसहासः ।।२३१

राधया सहजवत्सलात्मना
स्वीकृते व्रजविलासिनी गणे ।
स्वात्मभावकृतभाववैभवैः
प्रादुरास रसिकेन्द्रशेखरः ।।२३२।।

काचित् सुवलितललितप्रकाण्डं स्वांसे न्यधितकृष्णभुजदण्डम् ।
काचन भुवि पतितातिप्रणया ऽचरणमवृत निजवेणीलतया ।।२३३

द्वारा प्रिया को आलिङ्गन करके उठालिये । श्रीराधा उनको कुछ कहने से ही हरि निज अङ्ग स्पर्शज सुख समृद्धि को दान करके ही पुनर्वार अन्तर्धान करगये ।।२२८ अनन्तर गोपीगण निज जीवितेश्वरी राधा को दीनतमा की भाँति देखकर कारण पुछ कर, उनके मुख से आनु पूर्वक मङ्गलमय वृत्तान्त को सुनकर खुसी हो गई ।।२२६।। निज स्वामिनी राधा के साथ वे सब मिलकर कालिन्दी पुलिन में आगईं एवं राधा के साथ विहार दर्शन की लालसा से मनोज्ञ कृष्ण सङ्गीत को गाने लगीं, ।।२३०।। श्रीराधा की प्रीति से गोपीगण द्वारा सुन्दर रूप से रचित बहुविध कातर वाक्य को सुनकर अतुल विलासी अमृत रस मय हास्य शोभी श्रीहरि प्रमदा समाज में आविर्भूत हुये ।२३१ सहज वत्सल स्वभावा राधा व्रजाङ्गनागण को अङ्गीकार करने पर रसिकेन्द्र चूड़ामणि स्वात्मरति स्वात्म क्रीड़ होकर भी भाव समृद्धि को प्रकट कर उनके सम्मुख में आविर्भूत हो गये ।।२३२।। किसी रमणी सुवलित, ललित, विशाल, कृष्ण, भुज दण्ड को अपनी कंधे में

तप्ता हरिपदपङ्कजयुगलं काचन निदधावधिकुचमुकुलम् ।
अन्यानिमिषितनेत्रयुगेन प्रियमुखमपिवत्तर्षभरेण ।।२३४

अपरा पुन रपगमनाद् भीता, करयुगलेन प्रणयपरीता ।
श्रीहस्ताम्भोरुहमतिरुचिरं, समधृतनागरमौलेः सुचिरम् ।।२३५

क्वापि विलोचनरन्ध्रेणालं कृत्वा हृदि परिरभ्य रसालम् ।
योगीवास्ते परमानन्दामृतह्रदमग्ना चिरमस्पन्दा ।।२३६

श्रीराधा रसपोषण निरता स्तत्सुखसिन्धुनिमज्जनमुदिताः
प्रिययो र्लीलां गोपयुवत्य श्चित्रतरामवतारितवत्यः ।।२३७

स हरिर्व्रजनवयुवतिसमाजे, तदुरु निचोलोपरिसंरेजे ।
साङ्गसङ्गनिजकान्तासहितस्तासामास सपर्यामुदितः ।।२३८।।

वहु वाग्भङ्ग्या व्रजनव सुदृशां सहजप्रेमविवेचकमनसाम् ।।
प्रीतः स्वारसिकं निजभावं प्रकटितवानथ विरहाभावम् ।।२३९

रखली, किसीने अति प्रणय से दण्डवत् गिरकर निजवेणी लता द्वारा उनके चरणों को वंधा । अपर किसीने निमीलित नयनों से सतृष्ण होकर प्रियतम के मुखचुम्बन करने लगी ।।२३३-२३४।। पुनर्वार भग जायेंगे सोचकर डर डर से अन्य गोपाङ्गना प्रीति से अपने हाथों से नागर मणिके मनोहर हस्त कमलको देरतक पकड़ रखी थी ।२३५ किसी युवति ने रसमय श्याम को नयन द्वारा सुन्दर रूप से हृदय में स्थापन कर आलिङ्गन किया, एवं योगीजन की भाँति परमानन्द रस में मग्न होकर अनेक क्षण तक स्तब्ध होकर रहगयी ।।२३६।। गोपरामागण श्रीराधाके रस पोषण में निरत होकर उनके सुखसिन्धु में निमज्जित होकर खुस हो गईं, एवं प्रियतम युगल की विचित्रतर लीलाकी अवतारणा करनेलगी ।।२३७।। व्रजवन की युवतिके समाज में वह हरि आसन रूपमें रक्षित नारीयों की चून्दरीयों में वैठगये, एवं कान्ताओं के साथ भीड़कर वैठने से कान्ताओं ने हरि की खुव सेवा की ।।२३८।। सहज प्रेम विचारज्ञा व्रजनव युवति गण के वहुविध भङ्गी पूर्णवाक्योंकोश्रवण कर श्रीहरि आनन्दित होगये । और सम्भोग रसमय स्वारसिक धीर ललित भावको प्रकट किए ।।२३९।। व्रजाङ्गना

व्रजाङ्गनाभि र्मिलितः स कृष्णः
श्रीराधयातीव विराजमानः ।
तासामुरुप्रेमकथाभितृप्तो,
रासोत्सवायोल्लासितो बभूव ॥२४०॥

अथ कर्पूर पूर रुचिरुचिरे यमुनालहरी शीकरशिशिरे ।
उन्मद मधुकर कोकिलकीरे वहदतिपरिमलमलयसमीरे ॥२४१
परितः स्फुटनवकैरवनलिने विपुल कलिन्दसुतावरपुलिने ।
अद्भुत कल्प तरुभिरति सुभगे केलि सुसाधनवर्बिभिरनघे ॥२४२॥
बहुदीपिनि दिवि शारदचन्द्रे पररसभाजि चराचरवृन्दे ।
द्राघीयसि तद्रजनीयामे धुन्वति धनुरद्भुत नवकामे ॥१४३
सुरनरगन्धर्वाद्यैं र्वलिते निर्मितगीत सुवाद्यैः ।
नभसि रचित पुरु चित्रविताने, विलसित बहुविधदिव्यविमाने ॥२४४
सङ्गीतकपरपारगताभि, र्बहुविधनृत्य कला तुलिताभिः ।

के साथ मिलित श्रीकृष्ण राधा के साथ मिलित होकर अतिशय शोभित हो गये । उन सब के बहुविध प्रेमालाप से अतिशय तृप्त होकर रासोत्सव को सम्पन्न करने के लिए उल्लसित होगये ॥२४०। अनन्तर कर्पूर चूर्ण की भाँति मनोज्ञ यमुना पुलिन को दर्शन किए, वह पुलिन यमुना तरङ्ग स्थित जलकणसे सुशीतल, मलय पवन द्वारा सुगन्धित, नव कैरव पद्मादि द्वारा मण्डित था, केलि विलासादि की सामग्री से पूर्ण, एवं आश्चर्य आश्चर्य कल्पतरुओं से अति सुन्दर एवं परम निर्मल था ॥२४१॥२४२॥ आकाश में शारद चन्द्र निरतिशय उज्ज्वलालोक माला से उद्दीपित है, स्थावर जङ्गम् अत्युत्कृष्ट शृङ्गार रस से उन्मादित हैं। उस रास रजनी के चार प्रहर अधिकतर बढ़ गये एवं अद्भुत नव मदन ने पुष्प धनुषमें वाण की योजना की ।२४३ देव, नर, किन्नर, गन्धर्वादि सम्मिलित होकर सुसङ्गीत, सु वाद्य करने लगे, आकाशे में बहु विचित्र चन्दोआ रचित थे, एवं बहुविध दिव्य विमान भी शोभित रहीं ॥२४४॥ वे सब सङ्गीत विद्या

गौरतनुच्छवि भरित हरिद्भिः कृष्ण सुधाब्धि प्रीतिसरद्भिः ॥२४५॥
नाट्योचित भूषण वसनाभिः कटितट गाढ़वद्धरसनाभिः ।
हर्षोत्पुलकित तनुलतिकाभिश्चित्रारुणनवकञ्चुलिकाभिः ॥२४६
जघनान्दोलितवेणिलता भिः रत्नतिलकरञ्जित भालाभिः ।
समणि कनकमौक्तिकनासाभि र्मृदुलकपोलविचलमलकाभिः ॥२४७
मुक्ता पङ्क्ति द्युति दशनाभिः सुरुचिरचिवुकदन्त वसनाभिः ।
मुष्टिमेय कृशतरमध्याभि स्मरनृपसिंहासन,जघनाभिः ॥२४८
वद्धपरस्परचारुकराभिः कङ्कणगणझङ्कृतिरुचिराभिः
भ्राजत् ग्रैवेयक हाराभि श्चरणरणितमणि मञ्जीराभिः ॥२४९
व्रजनगरौज्ज्वलवरतरुणीभि र्निर्म्मितहरिरसमणि वरखनिभिः
युगयुगमध्ये स्मरसंरम्भि, श्रीमन्नागरकण्ठधृताभिः॥२५०
द्विद्विमध्यहरिमणिपरिरम्भि स्वर्णमणिकृतदामतिभाभिः ।

में पारदर्शिनी थीं । वहुविध नृत्य कला में निरुपमा थी, निज अङ्ग कान्ति से दशदिक् आलोकित कर रहीं थी, एवं कृष्ण रस सुधासमुद्र की प्रीति नदीस्वरूपा थीं ॥२४५॥ वे सव नाट्योपयोगी वसन भूषण पहिनी थीं, कटि में रसना वँधी थी, आनन्द से अङ्गों में पुलकावलि शोभित हो रही थी, एवं सव रमणीगण अरुण वर्ण की कञ्चुलिका से शोभित थी, जिनके नितम्व देश में वेणीलता आन्दोलित हो रही थी, रत्न तिलक से ललाट पटल रञ्जित था, नासा में मणि सहित मुक्ता शोभिता रही, एवं कपोल में कुञ्चित केश कलाप मृदुमन्द गति से चलरहे थे ॥२४७॥ जिन की दन्त पङ्क्ति से ज्योति निर्गत हो रही थी, चिवुक ओष्ठदेश सुरुचिर, मध्यदेश क्षीण, मुष्टिग्राह्य, कर कमल परस्पर के हाथों से आवद्ध, था, कङ्कण की मनोहर ध्वति से चारों और निनादित है, कण्ठदेश ग्रैवेयक हार से एवं मणिमय मञ्जीर ध्वनि से चरण सुशोभित है ॥२४९॥ निर्मल हरिरस मणि, विशुद्ध श्रृङ्गार रस की श्रेष्ठखनिस्वरूपा व्रजमण्डल के उज्ज्वल वराङ्गनागण प्रत्येक दो दो जन के मध्यमें एक एक कामाविष्ट नागर मणि के द्वारा कण्ठ आलिङ्गित होकर रहीं ॥२५०॥ मध्यवर्त्ती दो

रचितेऽत्यद्भुत मण्डलराजे वर्षति कुसुमंसिद्धसमाजे
राधाकृष्णोन्मदरसभासः प्रादुरास परमाद्भुत रासः ॥२५१

रतिरसपरसीमश्रीतनो राधिकाया ।
श्चरणकमललब्ध प्रौढ़ तादात्म्यभावैः ॥
ब्यरचि रुचिररासश्चित्रतत्तत् कलौघै
र्व्रजनवतरुणीनां मण्डलै र्माधवेन ॥२५१॥

अथ संववृधे सोऽद्भुत रासःप्रोन्मदमदनकोटिकृतःहासः ।
उन्मदराधिक, उन्मदकृष्णः प्रोन्मदयुवतिगणोन्मदतृष्णः २५३
सकलनिगमगणसुचमत्कारः सकलेश्वरगणरचितविचारः
परमाश्चर्यप्रेमविकारः परमानन्दमहोत्सवसारः ॥२५४
कृष्णरसैकस्फुरदुल्लासः परमाकाशगतध्वनिभासः

दो इन्द्रनील मणि के द्वारा स्वर्णमणि समूह द्वारा गठित हार की भाँति गोपीगण विरचित अति अद्भुत रास मण्डल के उपर सिद्धगण कुसुम वर्षण करने लगे थे, उस समय श्रीराधा कृष्ण की उन्मदरस वहुल परमाद्भुत रास क्रीड़ा का प्रादुर्भाव हुआ ॥२५१॥ जिन सब के देह रतिरस की परमावधि सुषमा को धारण किए हैं, उस श्रीराधिका के चरण कमल में प्रौढ़ तादात्म्य भाव प्राप्त विचित्र कला रस मयी व्रज, युवती गण को लेकर माधव ने मनोहर रास की रचना की २५२॥ इस के वाद अद्भुत रास प्रारम्भ हुआ, कोटि कोटि मदन प्रोन्मद हास्य करने लगे, उक्त रास राधिका को उन्मत्त कर दिया, कृष्ण को उन्मत्त किया, और प्रोन्मत्ता युवती गण भी उन्मद तृष्णा से विचलित ही उठी ॥२५३॥ जिस से वेद समूह भी विस्मित हो जाते हैं, जिस विषय में गोपीश्वर गण भी विविध विचार करते रहतेहैं, जिस के स्मरणसे भी परमाश्चर्य प्रेम विकार उपस्थित होता है, उस परमानन्दकन्द रसोत्सवका सार ही रास है ॥२५४॥ सर्वत्र केवल मात्र कृष्ण रसोल्लास ही दिखाई पड़ता है, तुमुल ध्वनि से आकाश व्याप्त हो गया है, दिक् दिक् में महा पटवास कुङ्कुमादि

दशदिक् प्रसृमर वरपटवासःपरममहापरिमल भरिताशः ।२५५
भूषण वसन तनुच्छविवर्ष प्रोल्लसदखिल भुवन रति हर्षः ।
केलिचमत्कृति परमोत्कर्ष, सकल पुमर्थ प्रथित निकर्षः ।।२५६
सरभस चक्रभ्रमण विलासः स्मर वश युवति परस्पर हासः ।
प्रकटोन्मदनवमन्मथकोटिः प्रकटमहाद्भुत रतिपरिपाटिः ।२५७
किङ्किणि नूपुर वलय घटानां वीणा बेणु तालमुरजानाम् ।
प्रेमोत्तारमधुरतरगानप्रणयिसमुत्थिततुमुलस्वानः ।।२५८
गगन स्थगित सगण शरदिन्दुः स्तम्भित सुर सुतादिक सिन्धुः ।
सुखविह्वल खगमृग पशु जातिः पुलक वलित तरु वल्लीविततिः २५९
द्रवमय विगलद् गिरिपाषाणः सरसपवन कृत सख्यभिमानः ।
मूर्च्छित मुक्तनीवि सुरवनितः खचरवृष्ट कुसुमोघै निचितः ।।२६०

चूर्ण बिखरे हुये है, अहो! परम सुगन्धि से दशों दिक् आमोदित हो गये ।।२५५।। भूषण, वसन, देह कान्ति धारा से निखिल भुवन में सुरतानन्द की विजय घोषणा होने लगी, केलि चमत्कार का परमोत्कर्ष विराजित हुआ एवं इस में ही निखिल पुरुषार्थ का परम सन्निवेश भी हुआ ।।२५६।। अति वेग से चक्रभ्रमण की भाँति विलास होने लगा, काम वशवर्त्ती युवतिगण परस्पर हँसने लगी, उन्मत्त कोटि कोटि मन्मथ प्रकटित हुये एवं महाद्भुत रति परिपाटी भी प्रकटित हुई ।।२५७।। किङ्किणि, नूपुर, वलय के निक्वण से वीणा वेणु करताल मृदङ्गादि की ध्वनि से, प्रेम पूर्ण महा मधुर सङ्गीत से, प्रणयिनी गोपीगण द्वारा तुमुल शब्द उत्थित हुआ ।।२५८।। आकाश में गण सहित शारदचन्द्र स्थगित हुआ, यमुना मानस गङ्गादि नदी समूह की गति स्तम्भित हो गईं, विहङ्ग मृगादि पशु जाति भी परम उल्लास से विह्वल हो उठी, एवं तरुलता समूह भी पुलकाञ्चित हो गये ।।२५९।। गिरि राज के पाषाण समूह पिघल रहे हैं, सरस पवन तव सख्य भाव को प्राप्त कर लिया अर्थात् समयानुकूल मृदुमन्द वायु प्रवाहित होने लगी, देव वनिता गण मूर्च्छित होगई और उनकी नीवी बन्धन भी खुलगये एवं आकाश चारीगण कुसुम की वर्षा कर के रास

प्रोच्छलदतुलमहारसजलधि र्भग्नमुनीश्वरपरमसमाधिः ।
केलिकलोत्सवपरमप्रथिमा कृष्णप्रेमसमुन्नतिसीमा ॥२६१

स्मरोन्मदैर्गोकुलसुन्दरीगणैः
समुत्थितो रासविलाससंभ्रमः ॥
सीमा परा प्रेमचमत्कृतीनां
स कोऽपि राधारसिकस्य जीयात् ॥२६२॥

तासां रसरभसवशमनसां विपुलपुलकपरिपूरितवपुषाम् ।
प्रियपरिरम्भोन्मदमदनानां किमपि न संवृतकुचवसनानाम् ।२६३
मुक्तवेणिविगलत् कुसुमानां तरलितमुक्तावलिरसनानाम् ।
प्रचलितकुण्डलगण्डतटानां विश्लथनीविप्रकटजघनानां ॥२६४
त्रुटितचारुकुचकुञ्चलिकानां छिन्नमाल्यमणिहारसराणाम् ।
श्रमजलपूरितसकलतनूनां म्लिष्टविलेपाञ्जनतिलकानाम् ॥२६५

मण्डल को व्याप्त कर दिये ॥२६०॥ अतुलनीय महारस सागर प्रोच्छ्लित हो रहा है, मुनीश्वर गण की परम समाधि टूट रही है, केलिकला के उन्मद की विशालता हो रही है, एवं कृष्णप्रेम समुन्नति की परमावधि हो गई है ॥२६१॥ कामोन्मत्ता गोकुलयुवतीगण के सहित राधा रसिक श्याम सुन्दर के यह अपूर्व रासविलासावेश चमत् कृति की परम सीमारूप में जय युक्त हो, ॥२६२॥ गोपीयों के मन केवल रास रभस के वशहो गये, देह विपुल पुलक जाल से परिपूरित हो गये, प्रियतमके परिरम्भण से मदनावेश अधिकतर बढ़ गया, उन के कुचावरण वसन विगलित होने पर भी उस को सम्भालने की शक्ति उनसब की नहीं रही ॥२६३॥ मुक्त वेणी समूह से कुसुम विगलित होने लगा, मुक्तावलि, काञ्चीदाम चञ्चल हो गये, गण्ड तट पर कुण्डलद्वय झोका ले रहे हैं, एवंनीवी बन्धन शिथिल होने पर जघन देश प्रकाशित हो गया ॥२६४॥ कुच युगल के आवरण रूप सुचारु काञ्चुलिका छिन्न भिन्न हो गई, माला समूह मणि हारादि भी छिन्न भिन्न होगये, श्रम जल से सर्वाङ्ग भर गया, एवं अङ्ग राग अञ्जन

प्रियतमपरिचुम्बितवदनानां प्रियतमनखरोल्लिखितकुचानाम् ।
प्रियतमभुजयुगकलितगलानां प्रियतममृष्टश्रमसलिलानाम् ।२६६

राधासन्धितकञ्चुलिकानां राधाग्रथितरुचिरनीवीनाम् ।
राधास्नेहैकात्म्यधनानां शतगुणवर्धिपरमसुषमाणाम् ॥२६७

माधवमधुराधरमधुपानां मुहुरति दुर्धरमदनमदानाम् ।
परकाष्ठांगतउन्मदललितः कोऽपि सुखाम्भोनिधिरुच्छलितः ॥२६८

गायन्तीनां दयितमिथुनं सानुरागैः सुरागै
र्नृत्यन्तीनां प्रमदमदनोद्दामलीलाकलाभिः ।
श्रीराधायाश्चरणकमलस्नेहतादात्म्यभाजाम्
रासक्रीड़ासुखमनुपमं वल्लवीनां बभूव ॥२६९॥

तत्र यदा सुरतैकसतृष्णौ मण्डलमध्ये राधाकृष्णौ

तिलक प्रभृति की म्लानता आ गई है ॥२६५॥ उन सब के वदन, प्रियतम द्वारा चुम्बित हो गये, कुच युगल प्रियतम के नखरा घात से क्षत विक्षत हो गये, प्रियतम के भुज युगल द्वारा उन सब के गलदेश गृहीत हुआ, एवं प्रियतम ने उनसबके श्रमजल राशि को मिटा दिया ॥२६६॥ श्रीराधाने उनसब की कञ्चुलिका को बंध दिया, नीवी वन्धन भी कर दिया श्रीराधा के स्नेह ही उन सब के लिए महाधन है, और उस से उन सब की सुषमा शत शत गुण से बढ़ी ॥२६७॥ माधव ने उन सब के मधुर अधर के मधुपान किया, मुहुर्मुहु उनसब के मदनावेश अति दुर्धर्ष भाव को प्राप्त किया अहो ! चरमावधि प्राप्त उन्मादनादायक, अतिमनोज्ञ किसी एक अनिर्वाच्य सुख समुद्र उच्छलित हुआ ॥२६८॥ वे सब सुन्दर सुन्दर राग रागिणी आलाप के द्वारा युगल किशोर की कीर्त्तिगाथा को गाने लगीं, प्रमद मदन के आवेश से उन्होंने अपरिसीमलीला कलादि प्रकट कर नृत्य किया, उन्होंने श्रीराधा चरण कमलके साथ स्नेह से तादात्म्य भाव को प्राप्त कर लिया, अहो ! गोपियों की वह क्रीड़ा निरुपम सुख निदान रूप हो गई थी ॥२६९॥ अनन्तर जब सुरतैकलालस श्रीराधा कृष्ण मिलित

मिलितौ ननृततुरथवा क्रमशः कोऽपि तदासीद्रासे सुरसः ॥२७०
वाद्यगीतपरयुवतीवृन्दे, पूर्णचमत् कृतिपरमानन्दे
तददर्शयत सुनागरमिथुनं स्वस्वसुशिक्षा अधिरसनटनम् ॥२७१
राधा तत् प्रियोरभवंस्ता, एकैकाङ्गेऽद्भुतरसवलितः ।
चलनविभङ्गीरतिसुविचित्रा वीक्ष्य वीक्ष्य चिरमनुकृतचित्राः २७२
सङ्गीतक बहुभङ्गीसारं, कमपि विहारं परमोदारम् ।
राधा तन्नागरयोर्मधुरं दृष्ट्वा मूर्च्छद् वनमपि सुचिरम् ॥२७३
रसमयनृत्यकलाद्भुतसङ्गी तुङ्गीतनवरतिरङ्गतरङ्गी ।
राधामाधवयो रतिललितः कोऽपि विलासः समभूदुदितः ॥२७४
अलकचिबुककुचकरस्पर्शी नीविधारणमधरामृतकर्षी ।
परमविचित्रपरिरम्भणचुम्बं शुशुभे तल्ललितं रसजृम्भम् ।२७५
मूर्च्छितमलुठद् गोपीवृन्दं मूर्च्छितमपतत् खगपशुवृन्दम् ।
मूर्च्छामापलतातरुवृन्दं सर्वममूर्च्छत्तत्र रसान्धम् ॥२७६

होकर अथवा क्रमश उस मण्डल में नृत्य करने लग गये तो महारस प्रकटित हुआ ॥२७०॥ गोपीगण नृत्य गीत में तन्मय हो जाने पर एवं रास मण्डल में पूर्ण चमत् कारमय परमानन्द विराजमान होने से मनोमोहन नागर द्वयने रसपूर्ण नृत्य विद्याको प्रकटन किया ।२७१ राधा एवं उन के प्रियतम कृष्ण के एक अङ्ग की अति विचित्र चलन विभङ्गी को देखकर गोपीगण अद्भुत रस युक्ता हो गईं अनेकक्षण तक चित्र पुत्तलिका की भाँति रहगईं ॥२७२॥ राधा एवं उनके नागर के सङ्गीत चातुर्य एवं परम रमणीय मधुर अनिर्वाच्य विहार को देखकर वृन्दावनस्थ स्थावर जङ्गमादि अनेक समयतक मूर्च्छित होकर रह गये ॥२७३॥ तब रसमय नृत्य कला के साहचर्य से अति उद्दाम नव सुरत द्वारा तरङ्गायित श्रीराधा माधव के अनिर्वचनीय विलास उदित हुआ ॥२७४॥ अलक कुञ्जित केश कलाप चिबुक एवं कुच मण्डलादि में कर स्पर्श होने लगा, नीवि धारण, अधरामृत का आकर्षण होने लगा । परम विचित्र परिरम्भण चुम्बनादि होने लगा और वह रस विलास भी क्रमशः सुन्दरतर हो गया ॥२७५॥

अथ रसिकेन्द्रः श्रितनिजकान्तः सुतुमुलरासक्रीड़ाश्रान्तः
अविशद् वारि सगोपीवृन्दः करिणीगणवृत इव कलभेन्द्रः ।।२७७
तत्र रचितपरमाद्भुतकेलिः शुशुभे स रसिकमण्डलमौलिः ।
राधापक्षव्रजयुवतिभिः पर्युक्षितउद्वसितसुखोभिः ।।२७८
क्रीड़ित्वा वहु सलिलोत्तीर्णः पुनरन्याम्वरभूषणपूर्णः ।।
कुङ्कुमलिप्तः प्रिययादीप्तः कुञ्जशयनमधि स सुखं सुप्तः ।।२७९
एवमपरां शारदरजनीरखिला एव व्रजनवतरुणीः
आनीयारचि राधापतिना रासो नवनवरतिवशमतिना ।।२८०

परम रस समुद्रोज्जृम्भणस्याति काष्ठा ।
परम पुरुषलीलारूपशोभातिकाष्ठा
परमविलसदाद्यप्रेमसौभाग्यभूमा ।
जयति परपुमर्थोत्कर्षसोमा स रासः ।।२८१

गोपीगण मूर्च्छित होकर लौट लगाने लगीं पशु पक्षिगण मूर्च्छित होकर पृथ्वी में गिरने लगे, वृक्ष लतादि भी मूर्च्छित होगये अधिक क्या कहूँ। वहाँ के सव के सव व्यक्ति रसान्ध होकर मूर्च्छाग्रस्त हो गये।२७६।। तत् पश्चात् रसिक राज, निज कान्तामणि के साथ सुतुमुल रास क्रीड़ा से परिश्रान्त होकर गोपीवृन्द के साथ करिणी गण के साथ मत्त करिवर की भाँति जल क्रीड़ाके लिए जल में प्रविष्ट हो गये ।।२७७।। रसिकेन्द्र चूड़ामणि परमाद् भुत केलि विलासादि की रचना कर शोभा विस्तार करने लगे, जल के और मुहकर राधा मध्य वर्त्तिनी व्रज नारीगरण को उत्तम रूप से सिञ्चित किए ।।२७८।। वहुविध जल क्रीड़ा के वाद श्याम सुन्दर जल से तीर में उठ कर पुनर्वार वसन भूषणादि को धारण किये, अङ्ग में कुङ्कुम लेपन कर प्रियाके साथ शोभित होकर कुञ्जमध्यमें सुख शय्यामें सो गये।२७९ इस प्रकार अनन्त शारद रजनी में निखिल व्रजनव युवती गण को ही आकर्षण कर श्रीराधावल्लभ नब नव रतिरस के वश हो कर रास रचना किये।।२८०।। वह रास परम रस सागर की प्रकाशशील

शुद्ध भावस्पृहावत्या मत्या कृष्णैकदत्तया
अद्भुतोऽयं माया रास प्रवन्धः प्रकटीकृतः ॥२८२
यथास्फूर्त्तिमया रास विलासोराधिकापतेः
वर्णितः स्वमुदे तेन मुदिता सन्तुसाधवः ॥२८३

इति समाप्तोऽयं रास प्रवन्धः

इमं रास प्रवन्धं यो गायेत् कृष्णानुरक्तधीः ।
लुठन्तितत् पदतले पुमर्थाः सर्व उत्तमाः ॥

—**—

चरमावधि है, परम पुरुष की लीला, रूप, शोभा की चरमावधि है, परम विलासमय आद्य (श्रृङ्गार) प्रेम सौभाग्यातिशय व्यञ्जक एवं परम पुरुषार्थ शिरोमणि की सीमा रूप में उत्कर्ष मण्डित हो ॥२८१। शुद्ध भाव स्पृहा शीला एवं श्रीकृष्णमें अनन्य निष्ठायुक्त मति के द्वारा यह अद्भुत रास प्रबन्ध मेरे से प्रकट हुआ ॥२८२॥ स्फूर्ति के अनुसार मैंने श्रीराधा रमण के यह रास विलास का निज आनन्द के लिए वर्णन किया, इस से साधुगण भी आनन्दित होंगे ॥२८३॥ कृष्णानुरक्तचित्त व्यक्ति यदि इस रास प्रवन्ध का गान करे तो उसके पदतल में सकल उत्तम पुरुषार्थ लुण्ठित होगा ॥२८४॥

इति श्रीप्रवोधानन्द सरस्वती विरचित
आश्चर्यरासप्रवन्धानुवाद समाप्त ॥

गौर गदाधरंनत्वा प्रेमानन्द कलेवरम् ।
विदुषा हरिदासेन भाषाव्याख्या कृतामुदा ॥

—**—

श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम्

श्रीहरिदासशास्त्रि सम्पादिता ग्रन्थावली

प्रकाशितग्रन्थरत्न	प्रकाशन सहायता
१। वेदान्तदर्शनम् भागवतभाष्योपेतम्	२०·००
२। नृसिंहचतुर्द्दशी	०·५०
३। श्रीसाधनामृतचन्द्रिका	४·००
४। श्रीसाधनामृतचन्द्रिका(वङ्गलापयार)	४·५०
५। श्रीगौरगोविन्दार्च्चन पद्धति	३·५०
६। श्रीराधाकृष्णार्च्चन दीपिका	२·००
७। श्रीगोविन्दलीलामृतमूलटीकाअनुवाद सर्ग१-४)	५·५०
८। ऐश्वर्य्यकादम्बिनी (मूल अनुवाद)	१·५०
९। संकल्पकल्पद्रुम सटीक, सानुवाद	२·००
१०। चतुःश्लोकी भाष्यम् (सानुवाद)	३·००
११। श्रीकृष्णभजनामृतम् (सानुवाद)	
१२। श्री प्रेमसम्पुटः (मूल टीका अनुवाद सह)	४·००
१३। भगवद्भक्तिसार समुच्चय (सानुवाद)	३·७५
१४। भगवद्भक्तिसार समुच्चय(सानुवाद वङ्गला)	३·००
१५। व्रजरीति चिन्तामणि(मूल,टीका,अनुवाद,)	४·००
१६। श्रीगोविन्दवृन्दावनम्	१·५०
१७। राधारससुधानिधि (वङ्गला)	१·७५
१८। श्रीकृष्णभक्तिरत्नप्रकाश	५·००
१९। हरिभक्तिसार संग्रह	१२·००
२०। श्रुतिस्तुतिव्याख्या	१४·००
२१। श्रीहरेकृष्णमहामन्त्र	·४०
२२। श्रीराधारससुधानिधिः (हिन्दी)	०·६०
२३। धर्म संग्रहः	३·७५
२४। श्रीचैतन्यसूक्तिसुधाकरः	४·००

श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम्

श्रीहरिदासशास्त्रि सम्पादिता ग्रन्थावली

प्रकाशितग्रन्थरत्न	प्रकाशन सहायता
२५ । सनत्कुमारसंहिता	२·५०
२६ । श्रीश्रीनामामृत-समुद्रः	०·६०
१७ । रास प्रबन्धः	३·००

प्रकाशनरतग्रन्थरत्न

१ । श्रीगोविन्दलीलामृत (५–२३ सर्ग)

२ । दशश्लोकीभाष्यम् । ३ । साधनदीपिका

४ । स्वकीयात्वनिरासविचारः तथा परकीयानिरूपणम्